प्रकाशक
रामभरोसेलाल अग्रवाल,
साहित्य-प्रकाशन-मंदिर,
हाईकोर्ट रोड,
ग्वालियर

प्रथम संस्करण
अक्टूबर १९५२
मूल्य १।।।)

मुद्रक
माडर्न प्रिंटिंग प्रेस,
ग्वालियर

श्री मिलिन्द के जीवन पर एक दृष्टि

जन्मस्थान श्री जगन्नाथप्रसाद 'मिलिन्द' का जन्म (ग्वालियर, मध्यभारत) मे हुआ।

जन्मतिथि कार्तिकी पूर्णिमा संवत् १९६४ वि०।

वर्तमान वासस्थान लश्कर (ग्वालियर, मध्यभारत)।

शिक्षा गुरार हाईस्कूल मे प्रारंभिक, तिलक राष्ट्रीय विद्यालय अकोला (मध्यप्रदेश) मे मैट्रिक तक, तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठ, पूना से मैट्रिक्युलेशन परीक्षा, उसके बाद साहित्य और समाज विज्ञान की उच्च शिक्षा काशी विद्यापीठ, बनारस के राष्ट्रीय कालेज मे। हिन्दी, संस्कृत और अंगरेजी के अतिरिक्त मराठी, उर्दू, बँगला और गुजराती भाषा का भी ज्ञान है।

पुस्तकें आपकी रचनाओ मे 'प्रताप-प्रतिज्ञा', 'समर्पण' तथा 'गौतम नन्द' नामक तीन नाटक, 'जीवनसंगीत', 'नवयुग के गान', 'बलि-पथ के गीत' तथा 'भूमि की अनुभूति' नामक चार कवितासंग्रह और 'चिन्तनकण' नामक एक निबंधसंग्रह, इस प्रकार आठ ग्रंथ, प्रकाशित हो चुके है। एक ऐतिहासिक तथा एक सामाजिक नाटक, एक कवितासंग्रह और एक निबंधसंग्रह तैयार हो रहा है। मध्यभारतशासन के शिक्षा-विभाग द्वारा नियुक्त साहित्यमनीषियो की समिति ने आपकी पुस्तक 'बलिपथ के गीत' को १००० रुपयो के प्रथम पुरस्कार के योग्य ठहराया। उत्तरप्रदेश के शासन के शिक्षाविभाग ने भी, विद्वानो की समिति के परामर्श पर, आपके 'बलिपथ के गीत' और 'समर्पण' पर ८०० रुपयो का पुरस्कार दिया।

कार्य विश्वभारती, शान्तिनिकेतन (बंगाल) तथा महिला-आश्रम, वर्धा (मध्यप्रदेश) में अध्यापक तथा प्रयाग और अजमेर मे साहित्यसेवी

तथा राष्ट्रकर्मी के रूप मे रहे। पंजाब की मासिकपत्रिका 'भारती' तथा ग्वालियर के अर्ध-साप्ताहिक पत्र 'जीवन' के सम्पादक रहे। ग्वालियर स्टेट कांग्रेस के प्रधानमंत्री तथा मध्यभारत प्रान्तीय कांग्रेस की कार्य-समिति के सदस्य रहे। सन १९४२ के आन्दोलन मे तथा बाद में भी जेलो में रहे। कांग्रेस द्वारा शासन-ग्रहण किए जाने पर, मिनिस्टर पद स्वीकार करने का अनुरोध किए जाने पर, उसे अस्वीकार कर चुके हैं। मध्यभारत समाजवादी पार्टी के, सर्वसम्मति से, दो बार लगातार प्रान्तीय प्रमुख तथा प्रान्तीय पार्लमेन्टरी कमेटी के अध्यक्ष चुने गए थे। बृहत्तर ग्वालियर साहित्यकार संघ, पत्रकार संघ, नव संस्कृति संघ आदि संस्थाओ के अध्यक्ष रह चुके हैं। शिक्षाविभाग द्वारा मध्यभारत आर्ट्स् एसोसिएशन की जनरल काउन्सिल के सदस्य भी नियुक्त किए गए हैं।

पिछले दिनो अस्वास्थ्य, राजनीति, सार्वजनिक कार्यों तथा अन्य अधिक व्यस्तताओ के कारण साहित्यनिर्माण मे पर्याप्त समय न लगा सके। अब कुछ वर्षो से पुनः साहित्यक्षेत्र ही मे अधिकतर कार्य करने लगे हैं। आजकल अपना अधिकांश समय मुख्यतः स्वाध्याय, ग्रंथलेखन तथा स्वतंत्र पत्रकार के कार्य में लगा रहे हैं। देश के अनेक प्रतिष्ठित हिन्दी, अँगरेजी, गुजराती, बँगला आदि भाषाओ के दैनिक पत्रो के प्रतिनिधि हैं। अनेक ग्रंथो के निर्माण का कार्यक्रम उनके सामने हैं। आजकल नियमित रूप-से साहित्यरचना कर रहे हैं। उनकी अनेक नई पुस्तके निकट भविष्यमे प्रकाशित होनेवाली हैं।

डॉ० भगवंत सहायजी को,

कृतज्ञता का एक

विनम्र प्रतीक

प्रारम्भिक

भारत के कुछ प्राचीन साहित्यसमीक्षकों ने 'काव्येषु नाटकं रम्यम्' कहकर दृश्य काव्य के उत्कृष्ट रूप नाटक की महत्ता का उद्घोष किया है। नाटक का प्रमुख अभिव्यक्तिवाहन गद्य होता है और 'गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति' कहकर गद्य को कवि की कसौटी घोषित करनेवाले साहित्य-रसिकों का भी प्राचीन भारत में अभाव नहीं रहा। आधुनिक साहित्य-मर्मज्ञ भी साहित्यजगत् में नाटक का एक विशेष स्थान स्वीकार करने में संकोच नहीं करते। जनरुचि भी साहित्य के सुरम्य अंग नाटक की ओर काफी आकृष्ट हो सकती और दृश्य काव्य के इस मनोरम स्वरूप को पर्याप्त प्रोत्साहन दे सकती है। जनरुचि के आधार की आशा पर निर्भर रहनेवाले अधिकतर प्रकाशक भी साहित्य के इस अंग का स्वभावत अपेक्षाकृत अधिक उत्साह के साथ स्वागत करते हैं। आधुनिक शिक्षा-संस्थाएँ भी नाटकों के अध्ययन—अध्यापन को विशेष प्रोत्साहन देती हैं। इन सबसे अधिक महत्त्व की बात यह है कि मनोरंजन और आनन्द-प्राप्ति के सम्बन्ध में जनता में पाई जानेवाली प्रत्यक्षीकरण एवं स्वावलम्बन की स्वाभाविक प्रवृत्ति नाटक को अपने लिए सबसे अधिक अनुकूल पा सकती है। देश के प्रत्येक स्थान के निवासियों में यह आकांक्षा होना स्वाभाविक ही है कि वे अपने नगर, उपनगर या ग्राम में नाटकों के अभिनय देखें और यथासंभव स्थानीय दर्शकों ही में से या उन्हीं—जैसे जीतेजागते मनुष्यों में से कुछ लोग उनका अभिनय भी करें। अपने ही जैसे मनुष्यों या अपने ही साथियों या पड़ोसियों को अभिनय करते देखकर स्थानीय दर्शकों को जो आनन्द मिल सकता है, वह अनिर्वचनीय है। यह निकटता, प्रत्यक्ष प्रतीति और अपनापन उन्हें स्वभावत सिनेमाफिल्मों को देखने में प्राप्त नहीं हो सकता। और फिर अभी अनेक वर्षों तक न तो उनका हर नगर, उपनगर और ग्राम में पहुँच सकना संभव है और न

वे अभी अधिकतर भारतीय शील और संस्कृति के अनुकूल तथा सुरुचिपूर्ण ही होती हैं।

नाटकों के लिए अनुकूल यह विशेष स्थिति न केवल सुरुचिपूर्ण नाटकों के लेखकों ही के लिए प्रेरणाप्रद है, वल्कि, जनता के सांस्कृतिक विकास में दिलचस्पी रखनेवाले कलाप्रेमी लोकसेवकों के लिए भी उद्बोधक है। इस विशेष स्थिति का पूरा उपयोग किया जाना आवश्यक है। यह अत्यन्त आवश्यक है कि स्वतंत्र भारत के प्रत्येक ग्राम, नगर और उपनगर में संस्कृतिप्रेमी नागरिकों और ग्रामीणों की सुगठित नाटक-समितियाँ स्थापित हों और उन नाटक-समितियों के द्वारा सुरुचिपूर्ण नाटकों के अभिनय हों। उन अभिनयों के द्वारा जनता को स्वस्थ मनोरंजन और उच्चकोटि का आनन्द तो प्राप्त हो ही सकेगा, उसकी सांस्कृतिक उन्नति भी हो सकेगी। जनता की यह सांस्कृतिक उन्नति केवल बड़े नगरों ही तक सीमित न रहकर छोटे छोटे उपनगरों और ग्रामों में भी पहुँचनी चाहिए।

इस आवश्यकता में महत्त्वपूर्ण संभावनाएँ और आशाएँ भी निहित हैं और उनका स्वप्न देखनेवाले तथा सांस्कृतिक दृष्टि से विकसित भारतीय जनता के भव्य भविष्यत् की कल्पना करनेवाले कवि के लिए यह स्वाभाविक ही है कि वह दृश्यकाव्य के उत्कृष्ट अंग नाटकों के निर्माण में उचित उत्साह के साथ लगे। इन पंक्तियों का लेखक भी इस दिशा में अपने दायित्व का गंभीरतापूर्वक अनुभव करना चाहता है और ऐसा करके वह अपना कर्तव्यपालन ही करेगा।

असत्य से सत्य का, अशिव से शिव का और असुन्दर से सुन्दर का संघर्ष जीवन की भाँति ही साहित्य और कला के क्षेत्र में भी एक चिरंतन और निरन्तर संघर्ष है। प्राचीन युग में भी यह संघर्ष हुआ और वर्तमान युग में भी हो रहा है। पुरातन काल के इस संघर्ष के फलस्वरूप, जीवन, कला और साहित्य में जो कुछ सत्य, शिव और सुन्दर था, वह, काल और क्षेत्र की सीमा का उल्लंघन करके, बच रहा है और जो कुछ असत्य, अशिव और असुन्दर था वह नष्ट हो चुका है। वर्तमान युग में भी जीवन, कला

और साहित्य के क्षेत्र को जिस असत्य, अशिव और असुन्दर ने आक्रान्त करने का उपक्रम कर रखा है, वह भी इसी सघर्ष के फलस्वरूप अन्तत परास्त और नष्ट होगा। और जो कुछ सत्य, शिव और सुन्दर होगा, वही, काल और क्षेत्र के व्यवधान को लाँघकर, वच रहेगा।

प्रत्येक सघर्ष के समय प्रारभ मे मालूम तो यही होता है कि भलाई-से वुराई जीत रही है, पर, अन्तत चरम विजय भलाई ही की होती है।

आज जीवन, साहित्य और कला के क्षेत्र के जिम्मेदार कार्यकर्ताओ-की वडी कठिन परीक्षा हो रही है। जिन मानवीय जीवनमूल्यो को वे अपनी आत्मा की सम्पूर्ण दृढता और गभीरता से प्यार करते है, उन्हीपर चारो ओर से वडे घातक प्रहार हो रहे है। रास्ता वडा लम्वा और कठिन है। प्राणो मे साधना का विनम्र दीपक जगाए वे तिमिर को चीरते हुए चल रहे है। धीरे धीरे आगे वढ रहे है। उनकी आँखो मे, आँखो ही मे नही, प्राणो में भी, उनका लक्ष्यविन्दु वसा है और उसीके आकर्षण, उसीकी प्रेरणा मे वे आगे वढ रहे है। उनकी साधनहीनता और शक्ति-हीनता उनके लक्ष्यप्रेम और उत्साह पर प्रतिकूल प्रभाव नही डाल पाती।

जीवन से अलग कटकर कला के जीवित रहने का सिद्धान्त अब वहुत पुराना पड गया है। आज कला और साहित्य भी जीवन ही के अग वन गए है। वस्तुस्थिति यह है कि आज यदि जीवन पर प्रहार होता है, तो वह साहित्य और कला पर होता है और यदि साहित्य और कला पर होता है, तो जीवन पर होता है।

मानवीय जीवनमूल्यो पर होनेवाले प्रहारो का उचित प्रतिकार प्रतिप्रहार नही हो सकता, वल्कि, रचना ही हो सकती है। यह तथ्य जीवन की भाँति ही साहित्य और कला के क्षेत्र मे भी प्रभावशील है। यदि हम कला और साहित्य के क्षेत्र में सत्य, शिव और सुन्दर पर होनेवाले असत्य, अशिव और असुन्दर के प्रहारो का उचित प्रतिकार करना चाहें, तो हमे सत्य, शिव और सुन्दर के प्रेरक, आराधक और समर्थक साहित्य और कला की अविरत रचना करने का यत्न करना चाहिए या ऐसे स्वस्थ एव सुरुचिपूर्ण साहित्य और कला को सक्रिय प्रोत्साहन देना चाहिए।

कलाकार और कलाप्रेमी का यह रचनात्मक संघर्ष उसके जीवन का उतना ही महत्त्वपूर्ण संघर्ष है, जितना जीवन, राजनीति, अर्थ और समाज के क्षेत्र मे कार्य करनेवाले लोकसेवक का अपने क्षेत्र का संघर्ष हो सकता है। किम्बहुना, सांस्कृतिक क्षेत्र के इस रचनात्मक संघर्ष का महत्त्व और भी अधिक है, क्योकि उसका प्रभाव अधिक स्थायी, गभीर और व्यापक होता है।

इन्ही सब भावनाओ और विचारो से प्रेरित होकर इन पंक्तियों का लेखक अपनी विनम्र तथा अकिंचन साहित्यसाधना मे जीवन का आनन्द और सार्थकता अनुभव करता है और नाटकरचना को अपनी साहित्यसेवा मे एक विशेष महत्त्वपूर्ण स्थान देना चाहता है। लेखक का सदा यह यत्न रहा है कि वह जो कुछ लिखे, उसमें सुरुचि का वह संस्पर्श अवश्य रहे, जो मानव को उठाता है, गिराता नही। यह उसके उपर्युक्त रचनात्मक संघर्ष का एक प्रमुख प्रेरणासूत्र रहा है। लेखक सौभाग्यशाली है कि इस सूत्र से सम्बन्धविच्छेद किए बिना ही वह कुछ लोकप्रियता भी पा सका है।

लेखक के पहले नाटक 'प्रतापप्रतिज्ञा' की रचना सन १९२९ मे हुई और उसी वर्ष उसके प्रथम संस्करण का प्रकाशन हुआ। वह नाटक इतना लोकप्रिय हुआ कि उसके अब तक लगभग एक दर्जन संस्करण प्रकाशित हो चुके है। उसकी सफलता से फलस्वरूप साहित्यिक मित्रों, पाठको और प्रकाशको के आग्रह मुझे और अधिक नाटक लिखने की निरन्तर प्रेरणा देते रहे, किन्तु, सन १९५० के पहले मै अपना दूसरा नाटक पूरा न कर सका। 'प्रतापप्रतिज्ञा' और 'समर्पण' की रचना के बीच के ये लगभग बीस वर्ष अधिकतर दूसरे कार्यों मे बीत गए। उन बीस वर्षों में मै जमकर यथेष्ट साहित्यसेवा न कर सका। बीचबीच में जो कविताएँ, निबन्ध आदि लिख लिया करता था, उनके संग्रह अवश्य तैयार हुए और प्रकाशित भी हुए, पर, हिन्दी के पाठको को एक नाटकावली भेंट करने की मेरी इच्छा मन की मन ही मे रहती चली गई। वे बीस वर्ष व्यर्थ भी नष्ट नही हुए। अन्य दिशा मे उनका एक अच्छा उपयोग भी हुआ। एक विनम्र जनसेवक तथा एक अकिंचन पत्रकार के रूप मे मैने

इन वर्षों में भारतीय जनता की राजनीतिक और आर्थिक स्वतत्रता के लिए यथाशक्ति सक्रिय सघर्ष करने का यत्न किया। मैं सोचता हूँ कि मानव के नाते वह मेरा पहला कर्तव्य था। मानवता को मैं साहित्यिकता के ऊपर स्थान देता हूँ।

भारतीय लोकतत्र के अभ्युदय के उप काल ने मुझे प्रेरित किया कि मैं साहित्य, कला और सस्कृति के क्षेत्र मे अधिक कार्य करने का यत्न करूँ और मैं प्रमुखत जो कुछ हूँ, वह वनने की ओर अधिक ध्यान दूँ। फलत, मैं सास्कृतिक क्षेत्र के उपर्युक्त रचनात्मक सघर्ष की ओर अधिक मुडने की चेष्टा करने लगा। अपने इस नए निश्चय के फलस्वरूप मैं दो नए कवितासग्रह पाठको को अर्पित करने को प्रस्तुत कर चुका हूँ तथा दो नए नाटक भी तैयार कर चुका हूँ। इस प्रकार हुआ यह है कि सन १९२२ से लेकर १९४९ तक की लगभग २८ वर्षो की अपनी साहित्यसेवा के द्वारा मैं पाठको को जितनी पुस्तकें भेंट कर सका था, उतनी ही पुस्तके मैंने सन् १९५० से लेकर १९५२ तक के लगभग तीन ही वर्षो में उन्हे अर्पित करने को प्रस्तुत कर दी। मुझे सन्तोष है कि मेरे साहित्यमर्मज्ञ मित्रो ने यह सम्मति दी है कि मेरी ये नई पुस्तकें मेरी पुरानी पुस्तको से अधिक अच्छी वन पडी है और लेखक के अनुभव और आयु की वृद्धि की दृष्टि से यह विकास स्वाभाविक ही समझा जा सकता है। पाठको और प्रकाशको से भी इन नई पुस्तको के सम्वन्ध मे मुझे सन्तोपजनक प्रोत्साहन मिलता जा रहा है तथा मिलते रहने की आशा है।

प्रस्तुत 'गौतम नन्द' नाटक 'प्रतापप्रतिज्ञा' तथा 'समर्पण' के वाद नाटकक्षेत्र मे मेरी तीसरी रचना है। मैंने यत्न किया है कि इसकी पृष्ठसख्या पिछले नाटको की पृष्ठसख्या से अधिक न होने पावे। इसके पात्रो की सख्या तो निश्चित रूप से पिछले दोनो नाटको के पात्रो की सख्या से आधी से भी कम है। इससे इसके अभिनय के लिए वहुत कम व्यक्तियो की आवश्यकता होगी। इसमे स्त्री और पुरुष दोनो प्रकार के पात्र हैं, अत, यह मानवता के दोनो अगो को अभिनय का अवसर देता है। इसमे भी पिछले दोनो नाटको की भाँति केवल तीन ही अक रखे गए हैं,

अत, यह हिन्दी के अनेक पाँच अंकोवाले नाटकों की भाँति लम्बा नहीं है। अधिक लम्बे नाटकों के अभिनय में आधुनिक युग में समयसम्बन्धी असुविधा होती है। यह इतना छोटा भी नहीं है कि इसके अभिनय से दर्शक अतृप्त रह जावें। बार बार पटपरिवर्तन की आवश्यकता से भी अभिनय में असुविधा होती है। पिछले नाटकों की अपेक्षा इसमें यह असुविधा और भी अधिक सीमा तक दूर कर दी गई है। 'प्रतापप्रतिज्ञा'-के तीन अंकों में कुल मिलाकर २३ दृश्य थे, 'समर्पण' में १२ और इसमें केवल ९ ही दृश्यों में तीनों अंकों की परिसमाप्ति हो जाती है। इस प्रकार, पृष्ठों की संख्या कम न करते हुए दृश्यों की संख्या कम करते जाने की ओर मेरी उत्तरोत्तर अधिक प्रवृत्ति स्पष्ट होती गई है। इसमें मैं दृश्यों की संख्या और भी कम कर सकता था, पर, उस दशा में दृश्य बहुत बड़े-बड़े हो जाते। अभिनेताओं को बीच बीच में कुछ विश्राम देने की इच्छा मुझे वैसा न करने दिया। इसी दृष्टि से इसमें यह भी यत्न किया गया है कि एक ही पृष्ठभूमि और एक ही पात्र लगातार दो दृश्यों में एकदम तत्काल न आने पावें। बड़े बड़े और आडम्बरपूर्ण मञ्चनिर्देश देने की कुछ आधुनिक हिन्दी नाटकों की प्रवृत्ति से भी इसमें परहेज किया गया है। मेरी राय में, इस दिशा में निर्देशकों को भी कुछ काम करने दिया जाना चाहिए। इसमें यथासंभव ऐसे दृश्य उपस्थित नहीं किए गए हैं, जिनका अभिनय करना या जिनके लिए साधनसामग्री जुटाना कठिन हो। तात्पर्य यह कि इसे अभिनय की दृष्टि से अधिक से अधिक सुविधा-जनक बनाने का पूरा यत्न किया गया है, साथ ही इसे साहित्यिक अध्ययन-के योग्य भी बनाया गया है।

अभिनय को आवश्यक महत्त्व देने की धुन में इसके साहित्यिक स्तर-को उचित सीमा के नीचे नहीं उतरने दिया गया है। इसका साहित्यिक स्तर भी 'प्रताप-प्रतिज्ञा' तथा 'समर्पण' के समान ही है।

भाषा को क्लिष्टता से बचाने का यत्न अवश्य किया गया है, किन्तु, आधुनिक हिन्दी गद्य की प्रचलित प्राञ्जल परिपाटी को भी कोई आघात नहीं पहुँचाया गया है। भाषा की दृष्टि से भी इसमें 'प्रतापप्रतिज्ञा' ही

का अनुसरण किया गया है, जो अभिनय और साहित्यिक अध्ययन दोनो के सामजस्य की दृष्टि से समालोचको द्वारा सफल घोषित की जा चुकी है।

इन्ही दोनो के सामजस्य की दृष्टि से इस नाटक को प्रकाशन के पूर्व अपने परिचित अभिनेताओ तथा साहित्य के विद्यार्थियो को दिखाकर उनकी सहमति तथा समर्थन भी प्राप्त करने का यत्न किया गया है। इससे व्यावहारिक रूप मे भी यह विश्वास हो गया है कि यह उक्त दोनो वर्गो के लिए उपयोगी हो सकेगा।

लेखक को यह भी विश्वास होता है कि सामान्य जनता को भी इसे पढने और इसका अभिनय देखने में आनन्द आयगा। जो सामान्य पाठक हिन्दी की प्रचलित साहित्यिक पुस्तकें पढ और समझ लेते है, उनके लिए यह पुस्तक भी दुरूह सिद्ध नही हो सकती। अशिक्षित जनता भी अच्छे अभिनेताओ द्वारा अभिनीत होने पर इसके अभिनय के सवादो को उसी प्रकार समझ सकेगी, जिस प्रकार रामायण तथा भागवत के आधार-पर निर्मित राम और कृष्ण सम्बन्धी ग्रामनाटको के अभिनयो के सवादो-को समझ लेती है। जिन क्षेत्रो में हिन्दी भाषा का प्रचलित स्वरूप नही समझा जाता, उनमें अभिनय के समय, क्षेत्रीय सुविधा की दृष्टि से, अभिनेता भाषासम्बन्धी कुछ परिवर्तन भी कर ले सकते है।

इस नाटक मे कपिलवस्तु के ऐतिहासिक शासक गौतम शुद्धोदन के कनिष्ठ पुत्र तथा तथागत गौतम बुद्ध के अनुज गौतम नन्द का कथानक है। कथानक कहने को तो ऐतिहासिक है, पर, इतिहास मे उसका उल्लेख विस्तार से नही मिलता। बीज के रूप मे इतिहास से इतना इगित मिलता है कि गौतम बुद्ध के गृहत्याग के बाद शाक्यवशीय शासक शुद्धोदन ने जिस नन्द पर आशा लगाई थी, वह भी गौतम बुद्ध के आदेश पर, अपने विवाह, नवगृहप्रवेश तथा राज्याभिषेक के ऐन मौके पर भिक्षु बन गया था। यह कथानक इतना हृदयस्पर्शी है कि मेरे आदरणीय गुरुजनो मे से एक सुप्रसिद्ध इतिहासज्ञ ने इसे नाटकरचना के योग्य बतलाया। फलत, इतिहास द्वारा बीज रूप मे प्राप्त इस कथानक को कल्पना के द्वारा पल्लवित और पुष्पित करके नाटक का रूप देने का यत्न किया गया।

गौतम बुद्ध इतने महान् थे कि उनके युग के इतिहास और साहित्य पर अधिकतर उन्हीकी छाप है। उन्हीके वर्णन से तत्कालीन इतिहास भरे पडे है। उनके अनुज नन्द के साथ न तो इतिहास ने उचित न्याय किया और न साहित्य ने। इतिहास तो अधिकतर महान् विभूतियो को केन्द्रविन्दु बनाकर चलता ही आया है, साहित्य भी सामान्य व्यक्तियो के प्रति प्राय कृपण रहा है। भदन्त अश्वघोष ने नन्द तथा उसकी पत्नी सुन्दरी के सम्बन्ध में 'सौन्दरनन्द' नामक एक काव्य सस्कृत में अवश्य लिखा है, किन्तु, उसमे भी तथागत गौतम बुद्ध ही को प्राधान्य और नन्द को गौण स्थान दिया गया है। नन्द के सम्बन्ध मे उससे भी मुझे वीजरूप कथानक के अतिरिक्त और कोई सहायता न मिल सकी। जो कुछ सहायता मिली है, उसके लिए मैं इतिहासकारो तथा कविवर अश्वघोष के प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ।

अपनी अद्वितीय महत्ता के कारण गौतम बुद्ध के लिए वह सब तप और त्याग करना अत्यन्त स्वाभाविक ही था, जो उन्होने किया, किन्तु, गौतम नन्द का त्याग और वलिदान भी अपना एक विशेष स्थान रखता है, क्योंकि वह एक सामान्य राजकुमार थे। उनकी दुर्वलताएँ दुर्दम्य थी और उनके सामने अपार प्रलोभन थे। भरी जवानी मे अत्यन्त अनुरक्त तथा सुन्दर पत्नी को छोडकर उन्होने गृह त्याग किया था और ठीक ऐसे अवसर पर किया था, जब विवाह, नवगृहप्रवेश और राज्याभिषेक के तीन तीन महान् अवसर उनके सामने उपस्थित थे। अवसरो को छोडने की यह पुरानी कहानी अवसरवाद, भोगवाद और स्वार्थ के नए आक्रमणो के विरुद्ध भी रचनात्मक सघर्ष की दीपज्योति बन सकती है। नन्द के त्याग और वलिदान ने लेखक को प्रभावित किया है, आशा है, वह पाठको को भी प्रभावित करेगा। पाठको के पुराने और सुपरिचित प्रेम के विश्वास के आधार पर मैं अपना यह नया नाटक साहित्यक्षेत्र मे सविनय प्रस्तुत करता हूँ।

ग्वालियर, २-१०-५२ जगन्नाथप्रसाद मिलिन्द

पात्र सूची

पुरुष

नन्द	शुद्धोदन के पुत्र, कपिलवस्तु के राजकुमार
शुद्धोदन	कपिलवस्तु के राजा
देवदत्त	नन्द के मित्र
कुम्भक	शुद्धोदन के एक पुरोहित
आनन्द	गौतम बुद्ध के शिष्य, भिक्षु

स्त्री

सुन्दरिका	नन्द की पत्नी
प्रजावती	नन्द की माता
माधविका	सुन्दरिका की सखी
कुडेश्वरी	कुम्भक की पत्नी

पहला अंक

पहला दृश्य

[राजकुमारी सुन्दरिका का उद्यान। सायंकाल]

[सुन्दरिका और माधविका बैठी हैं। दोनों आपस में बात-चीत कर रही हैं। कुछ दूर पर वीणा रखी है।]

माधविका

सखी सुन्दरिका, राजधानी का वसन्तोत्सव इस बार कुछ फीका-फीका-सा लग रहा था। इसका क्या कारण था ?

सुन्दरिका

कारण तुम भी जानती हो माधविका! इस बार, उस अवसर पर, हमारी राजधानी के निकट आम्रवन में तथागत गौतम बुद्ध का आगमन हुआ था। अधिकांश नागरिक और नागरिकाएँ उनका उपदेश सुनने

वहाँ चली गई थी । जहाँ जनता ही न हो, वहाँ सार्वजनिक उत्सव कैसा ?

माधविका

उससे एक नई समस्या उत्पन्न हो गई है राजकुमारी! जबसे महाराज ने तथागत का उपदेश सुना है, तबसे वह राज्यकार्य की ओर से कुछ उदासीन से रहने लगे हैं । उन्होंने महारानी से स्पष्ट कह दिया है कि अब वह युवराज-को राज्य सौंपकर सन्यास ग्रहण करना चाहते हैं । महाराज का कथन है कि उनके गृहस्थजीवन का अब केवल एक ही कर्तव्य और शेष रह गया है ।

सुन्दरिका

वह क्या ?

माधविका

तुम्हारा विवाह ।

[सुन्दरिका के मुख पर क्षण भर ललाई की एक झलक दिखाई देती है । वह तत्काल प्रकृतिस्थ हो जाती है ।]

सुन्दरिका

व्यर्थ का प्रश्न है यह । आज का युग धीरे-धीरे तथागत गौतम बुद्ध-का युग बनता जा रहा है । इस युग में जब सन्यास ही जीवन की सबसे अच्छी स्थिति समझी जा रही हो, तब विवाह का क्या मूल्य ? पहले विवाह करना और फिर भिक्षु बन जाना ! पहले भवन का निर्माण करना और फिर उसका विनाश करना ! मानो जीवन कोई खेल हो ! ऐसे भवन-को बनाया ही क्यों जाय, जिसे स्वयं ही आगे चलकर मिटाना हो ?

माधविका

ये कैसी बातें कर रही हो राजकुमारी ? अपने पिता के हृदय की कोमल भावनाओं को समझो । महाराज के जीवन की इससे बड़ी इच्छा-

क्या हो सकती है कि वह अपनी प्रिय पुत्री को सुखमय विवाहित जीवन में प्रवेश करते देखे ?

सुन्दरिका

उनकी सबसे बड़ी आकांक्षा तो प्रव्रज्या है, सबसे बड़ी साध तो सन्यास है। पुत्री तो उनकी आकांक्षा की पूर्ति के मार्ग मे एक बाधा है, जिसे पराए घर भेजकर वह अपना मार्ग निष्कण्टक बनाना चाहते है। न जाने, इन पुरुषो को क्या हो गया है ! छोटे से लेकर बड़े तक, सब के सब, नारी-को अपने मार्ग का काँटा समझते है। नारी को क्षुद्र समझना ही मानो महत्ता-का लक्षण बन गया है। नारी के प्रति घृणा और उपेक्षा की दृष्टि सभी-में विद्यमान है, प्रत्येक नागरिक मे, और मैं क्षमाप्रार्थिनी हूँ, मेरे पिताजी मे भी और पूज्यपाद तथागत गौतम बुद्ध मे भी।

माधविका

तथागत मे भी ?

सुन्दरिका

हाँ, तथागत मे भी। क्या तुम नही जानती कि तथागत, नारी को प्र-व्रज्या के योग्य नही समझते ? क्या तुमने नही सुना कि तथागत कहते है कि केवल पुरुषो को बौद्धधर्म के सघ में सम्मिलित करना चाहिए, नारियो-को नही ? क्या इस सिद्धान्त मे नारी को हीन समझने की भावना नही छिपी है ? यदि यह मेरा भ्रम हो, तो मैं क्षमाप्रार्थिनी हूँ !

माधविका

भ्रम तो है ही ! तथागत की कितनी प्रशसा आजकल जन-जन के मुख से सुनी जा रही है ! तथागत जैसे महात्मा नारीजाति को हीन नही समझ सकते। वह स्त्री और पुरुष में भेदभाव नही कर सकते। सभव है, पुरुष की दुर्बलता से परिचित होने के कारण, तथागत नारी को पुरुष-से दूर रखना चाहते हो। पुरुष के हीन स्वार्थ की बलि बनकर, नारी

गृहस्थ-जीवन में बहुधा जैसी नारकीय स्थिति मे पडी रहती है, वैसी स्थिति की छाया मे अपने सघ को बचाने के लिए ही, सभवत, तथागत ने नारी की प्रव्रज्या पर प्रतिबन्ध लगाया हो।

सुन्दरिका

कारण कुछ भी हो, स्त्री और पुरुष की असमानता की भावना पर आधारित कोई भी नियम चिरस्थायी नही हो सकता। एक भारतीय नारी के रूप मे मेरे हृदय मे जो दृढ आत्मविश्वास है, भविष्य के प्रति जो आस्था है, उसके सहारे मै डके की चोट यह कह सकती हूँ कि समदर्शी और न्याय-प्रिय तथागत किसी दिन इस प्रतिबन्ध को अवश्य समाप्त कर देंगे और पुरुष की भाँति ही नारी को भी भिक्षुणी बनकर धर्मसंघ मे सम्मिलित होने की अनुमति देगे।

माधविका

परन्तु, मेरी वह विवाह वाली बात तो अधूरी ही रह गई। क्या तुम अपने माता-पिता से विवाह के प्रश्न पर विद्रोह करोगी? क्या तुम उनकी आज्ञा की अवहेलना करके सदा अविवाहित ही रहोगी?

सुन्दरिका

यह तो मैने नही कहा बहन! मैने तो अपना एक विचार प्रकट किया था। चिन्तन के गर्भ से नम्रता का जन्म होता है, उद्दण्डता का नही। यदि मातापिता का आग्रह ही होगा, तो उनकी आज्ञाकारिणी पुत्री के रूप मे मुझे उनका अनुशासन स्वीकार करना ही पडेगा।

माधविका

कैसी भली है मेरी सहेली! अच्छा सखी, यह तो बताओ कि वर के निर्वाचन के सम्बन्ध मे महाराज के हृदय का असमंजस कैसे दूर हो सकता है?

सुन्दरिका

कैसा असमजस?

माधविका

महाराज उस दिन महारानी से कह रहे थे कि अपनी राजकुमारी सुन्दरिका के विवाह के लिए हम कपिलवस्तु के शाक्य नरेश शुद्धोदन के पुत्र तथा गौतम बुद्ध के भाई राजकुमार नन्द को चुनना चाहते हैं। गौतम बुद्ध के राज्यत्याग के बाद अब गौतम नन्द ही गौतम शुद्धोदन के राज्य के उत्तराधिकारी हैं। किन्तु, नन्द को स्वीकार करने मे एक बहुत बडा भय है ?

सुन्दरिका

वह क्या ?

माधविका

महाराज को यह भय है कि राजकुमार नन्द भी कही तथागत गौतम बुद्ध की प्रेरणा से प्रभावित होकर उनकी भाँति ही भिक्षु न बन जायँ।

सुन्दरिका

यह भय तो प्रत्येक के सम्बन्ध मे हो सकता है। पिता जी क्या आए दिन यह नही सुनते कि एक के बाद एक, नागरिक और शासक, राजा और राजकुमार, तथागत के उपदेश से प्रेरित होकर भिक्षु बनते जा रहे हैं। तथागत गौतम ने इस देश में प्रव्रज्या की एक शान्तिपूर्ण, किन्तु क्रांतिकारी लहर उत्पन्न कर दी है। उसके प्रवाह से बचना दिन-पर-दिन कितना कठिन होता जा रहा है! किन्तु, वास्तविक बात तो कुछ और ही है बहन ! मेरे पिताजी का मुझपर विश्वास नही है।

माधविका

तुमपर अविश्वास का तो कोई प्रश्न उत्पन्न नही होता।

सुन्दरिका

क्यो नही होता ? क्या यह मुझपर, मेरी सारी क्षमता पर, सरासर अविश्वास नही है कि वह यह समझते है कि मेरे विवाह के बाद, मेरे जीते

जी, मेरे पति मुझे छोड़कर सन्यास ग्रहण कर सकते हैं ? यह तो मेरे नारीत्व-का, मेरे भावी पत्नीत्व का अपमान है। खेद है कि स्वयं मेरे जन्मदाता पिता ने मुझे नहीं समझा। उन्होंने नहीं समझा कि एक भारतीय नारी-के रूप में मुझमें एक विशेष क्षमता है, जो मुझे इतिहास से थाती के रूप में मिली है।

माधविका

विशेष क्षमता कैसी ?

सुन्दरिका

ऐसी कि मैं अपने पति में अपने आप को उसी तरह विसर्जित कर दे सकती हूँ, जिस तरह सीता ने अपने को राम में कर दिया था। क्या सीता-के जीते-जी राम का उन्हें छोड़कर सन्यासी हो सकना सम्भव था ? खेद है बहन, आज की नारी, सम्भवत, प्राचीन युग की नारी से कुछ भिन्न स्तर, भिन्न कोटि पर उतरने का उपक्रम करने लगी है। यह मेरी समझ-में नहीं आता कि मेरी माता के रहते मेरे पिता सन्यास ग्रहण करने की बात कैसे सोच रहे हैं और सौभाग्यवती यशोधरा देवी के रहते राजकुमार सिद्धार्थ घर छोड़कर कैसे जा सके ?

माधविका

पूजनीया महारानी तथा माननीया यशोधरादेवी के सम्बन्ध में ऐसी असम्मान की भाषा बोलना तुम्हें शोभा नहीं देता सुन्दरिका ! तुम्हारा यह अभिमान तुम्हारे योग्य नहीं है।

सुन्दरिका

अन्याय न करो माधविका ! मेरा आशय उन उन पूज्य महिलाओं-का अपमान करने का नहीं है ! और अपना अहंकार प्रकट करने का तो कदापि नहीं ! मैं तो केवल युग-परिवर्तन की एक बात कह रही थी। एक वह युग था कि पत्नी सीता ने अपने पति राम के हृदय पर अपने निःस्वार्थ और तन्मय प्रेम और सम्पूर्ण तथा निःशेष आत्मसमर्पण से ऐसा अधिकार

प्राप्त कर लिया था कि राम को चौदह वर्ष का वनवास और तपस्वी-का कठोर जीवन तो सह्य था, किन्तु, सीता का एक क्षण का वियोग भी असह्य। पतिप्राणा सीता से बिछुड़ते ही राम किस प्रकार पेड़ों और पशु-पक्षियों तक से लिपट कर रोए थे। याद है वह कहानी ! मेरा आदर्श तो वही प्रेममयी पत्नी सीता है। मैं तो पत्नी के वियोग की कल्पना मात्र से प्रत्येक पति की आँखों से राम के वही अविरल आँसू उमड़ते देखना चाहती हूँ।

माधविका

तब तो महाराज का असमंजस निराधार है। वह नहीं जानते कि राजकुमारी सुन्दरिका के रूप में उन्होंने कितनी महिमामय नारी को जन्म दिया है।

सुन्दरिका

प्रश्न महत्ता का नहीं, लघुता का है। मैंने जो कुछ पढ़ा और सोचा है, उससे मैं इस परिणाम पर पहुँची हूँ कि सामान्य से सामान्य नारी भी जब अपने सारे अहंकार, महत्ता और पृथकता के भाव को छोड़कर अपने तन्मय और निस्स्वार्थ प्रेम के द्वारा अपने आपे को अपने प्रियतम पति में विसर्जित कर देती है, तब स्वभावतः उसे यह असाधारण अधिकार प्राप्त हो जाता है कि उसका पति भी उसमें पूर्णतया तन्मय हो और उसके बिना अपने जीवन को निरर्थक समझे।

माधविका

तो अब मैं जाऊँ और जाकर महारानी के द्वारा महाराज के पास यह सन्देश पहुँचवाऊँ कि उनकी पुत्री सुन्दरिका ऐसी धातु की बनी हुई है कि उसके जीते जी यह असम्भव है कि राजकुमार गौतम नन्द उससे विवाह करके, उसे छोड़कर संन्यासी हो जायँ।

सुन्दरिका

मुझे इतना महत्त्व न दो माधविका ! मैं एक सामान्य नारी हूँ। पिताजी, माताजी, तथागत गौतम और देवी यशोधरा के चरणों की धूल-

की बराबरी भी मैं नही कर सकती, किन्तु, कभीकभी ऐसा होता है कि बड़े जिस छोटी सी बात को अपने बड़प्पन के कारण नही समझ पाते, उसे छोटे अपनी लघुता के कारण समझ जाते है।

माधविका

कौन-सी छोटी-सी बात ?

सुन्दरिका

ऐसी कई बाते है। मेरा हृदय कहता है कि यदि भिक्षु बनना उचित है, तो वह सदा उचित होना चाहिए। जो सन्यास पिताजी स्वय ग्रहण करना चाहते है, वह यदि उचित है, तो उन्हे अपने भावी जामाता के सन्यास-ग्रहण की कल्पना से क्यो कॉपना चाहिए ? यदि नारी के प्रेम और उसके विवाहित जीवन की शक्ति का पिताजी की दृष्टि मे कोई महत्त्व नही है, उस पर उन्हे विश्वास नही है, तो उन्हें अपनी पुत्री के विवाह की इच्छा क्यो करनी चाहिए और यदि है, तो उन्हे यह भय क्यो होना चाहिए कि उनकी पुत्री अपने प्रेम की सारी शक्ति लगाकर भी उनके भावी जामाता-को सन्यास ग्रहण करने से न रोक सकेगी ?

माधविका

और फिर एक बात और भी तो है। राजकुमार गौतम नन्द, नन्द है; सिद्धार्थ नही। उनके सरस हृदय, स्नेहपूर्ण स्वभाव और आमोदप्रिय जीवन के यश की सुगन्ध देश-देशान्तर में फैल रही है। हमारी अप्सरा से सुन्दर राजकुमारी को सहधर्मिणी के रूप में पाकर वह सन्यासी होने का कभी स्वप्न भी न देख सकेंगे।

सुन्दरिका

पागलपन की बातें न करो सखी ! देखो, संध्या की सुन्दरता धीरे-धीरे कैसी सघन होती जा रही है ! ये बाते तो बहुत हो चुकी ! अब कुछ स्वर-साधना भी होने दो। बहुत दिनो से तुम्हारा कोई गान नही सुना।

अब की बार तो वसन्तोत्सव भी सूना ही चला गया! तुम गाती क्या हो, तुम्हारी तन्मय आराधना के सूत्र में बँधकर मानो स्वयं भगवती सरस्वती धरती पर साकार होकर उतरने लगती है। कला के वैभव का उच्च शिखर तुम भले ही प्रकट न करो, पर, अपनी आत्मसमर्पण की भावना से तुम कला की तन्मयता का अनुभव अवश्य करा देती हो। तुम्हें यह किन शब्दों में बताऊँ बहन, कि योगियों के निर्वाण और ब्रह्मानन्द से तुम्हारी स्वरलहरी कम आनन्द देने वाली नहीं होती।

माधविका

झूठी प्रशंसा से कला की अवनति होती है राजकुमारी! तुम मुझे इस प्रकार लज्जित न करो! मैं यह अच्छी तरह जानती हूँ कि संगीतकला-के क्षेत्र में मैं क्या हूँ और तुम क्या हो। तुम्हारी वीणा की झंकार यदि मेरे कण्ठ के स्वर का साथ न दे, तो वह कला के संसार में आधारहीन बटोही-की भाँति भटकता ही फिरे। यदि तुम्हारा यही आदेश है, तो, मैं तुम्हारी वीणा लिए आती हूँ। यदि तुम वीणा बजाने की कृपा करोगी, तो उसके सहारे मैं भी अपना कण्ठ खोलने का कुछ साहस कर सकूँगी।

[माधविका तत्काल जाकर वीणा ले आती है। उसे सुन्दरिका के हाथ-में देती है। सुन्दरिका वीणा बजाती और माधविका गाती है।]

माधविका

[गीत]

भारति, छेड़ो ऐसी तान,
जिससे विषम-व्यथा-विष विगलित,
सुखी, सरस यह जगत्-प्रांत हो;
जन-जन के मन-मन में ज्योतित

स्नेह-दीप निर्धूम, शान्त हो;
कोमल, करुणारुण हो कण-कण,
मिटे द्वेष, अभिमान।
भारति, छेड़ो ऐसी तान !
मानव-उर के रससागर में
उठें हिलोरें सहृदयता की,
कला-कलाधर की किरणों के
स्पर्शपुलक की आकुलता की;
हो झंकार श्वास जगती की,
गान विश्व का प्राण !
भारति, छेड़ो ऐसी तान !

[पट-परिवर्तन ।]

दूसरा दृश्य

[कपिलवस्तु में राजकुमार गौतम नन्द का वासस्थान। मध्याह्न।]

[राजकुमार गौतम नन्द तथा राजकुमार देवदत्त बैठे हैं। दोनों वार्तालाप कर रहे हैं।]

नन्द

मित्र देवदत्त, यदि तुम रुष्ट न हो, तो मैं यह पूछना चाहता हूँ कि तुम्हारे मुख पर निरन्तर किसी भयकर सकल्प की छाया क्यो दिखाई देती है?

देवदत्त

मैं तो निरन्तर अपना मुख नही देख सकता राजकुमार नन्द! यह तो दूसरे ही जान सकते हैं कि मेरे मुख पर क्या दिखाई देता है और क्यो दिखाई देता है। मैं तो केवल इतना ही जानता हूँ कि मेरे मन में एक द्वन्द्व है! उस अन्तर्द्वन्द्व का मन्थन मुझे निरन्तर व्यस्त रखता है।

उस द्वन्द्व के मूल में आदर और द्वेष दोनो है। दोनो से प्रेरित दो भिन्न-भिन्न सकल्प हैं। आदर से प्रेरित सकल्प की छाया कोमल है और द्वेष-से प्रेरित सकल्प की छाया कठोर। कोमलता की छाया मुख पर देख सकना कठिन है, किन्तु, कठोरता की छाया अनायास दिखाई देती रहती है।

नन्द

अपने अन्तर्द्वन्द्व का रहस्य क्या मुझसे भी छिपाओगे भाई ?

देवदत्त

तुमसे तो, मित्र, कुछ भी नही छिपाया जा सकता। मेरा अन्तर्द्वन्द्व यह है कि गौतम बुद्ध द्वारा प्रवर्तित धर्म पर जहाँ दिन-पर दिन मेरी श्रद्धा बढती जा रही है, वहाँ उनके व्यक्तित्व पर मेरा रोष प्रतिक्षण प्रबल होता जा रहा है। मेरी श्रद्धा अन्धी नही है, किन्तु, क्रोध अन्धा है। यदि किसी दिन मैं एक बौद्ध भिक्षु बन जाऊँ, तो तुम्हें आश्चर्य न होना चाहिए, यदि किसी दिन बौद्ध धर्म और सघ के सुधार के प्रश्न पर बुद्ध से मेरा मतभेद हो जाय, तो तुम्हे विस्मय न होना चाहिए और यदि किसी दिन मैं व्यक्तिगत द्वेष से पागल होकर सिद्धार्थ की हत्या कर डालूँ, तो उस स्थिति मे भी तुम्हे आश्चर्य न करना चाहिए।

नन्द

सिद्धार्थकुमार की हत्या! ऐसे शब्द मैं नही सुन सकता! नही सहन कर सकता! धर्म के पचडो से तो मै दूर हूँ, पर, अपने भाई सिद्धार्थ-के व्यक्तित्व के लिए मेरे हृदय मे बडा प्रेम है, बडा आदर है। तुम कैसे विचित्र मनुष्य हो देवदत्त! जिन तथागत बुद्ध के धर्म पर तुम्हारी श्रद्धा है, उन्हीके शरीर को तुम नष्ट करना चाहते हो!

देवदत्त

धर्म का शरीर से कोई सम्बन्ध नही है नन्द! और धर्म के विषय-मे भी मैं बुद्ध का अन्ध अनुयायी न बन सकूँगा। मेरे मन की प्रवृत्ति पूर्णता की

ओर है और बुद्ध की प्रवृत्ति मध्यम मार्ग की ओर। बौद्ध भिक्षु बनकर भी मैं गौतम का निरा पिछलग्गू न बनूँगा। मैं बौद्ध धर्म को पूर्ण तथा अधिक-से अधिक पवित्र बनाने में लग जाना चाहूँगा और यदि सिद्धार्थ मुझ से सहमत न होंगे, तो मैं उन्हें छोडकर आगे बढना चाहूँगा। यही नही, मैं उनकी ढीली नीति का घोर विरोधी हूँगा।

नन्द

तत्वचर्चा एक अलग वस्तु है देवदत्त! उसपर मेरा कोई अधिकार नही, उसमे मेरी कोई रुचि नही! उसके विवाद में मैं नही पड सकता, नही पडना चाहता। किन्तु, मैं एक मनुष्य हूँ, और मनुष्य होने के नाते मैं सिद्धार्थ के भ्रातृत्व के स्नेहबन्धन में बँधा हुआ हूँ। उनके भाई के नाते, मैं तुम से यह जानना चाहता हूँ कि उनके व्यक्तित्व के प्रति तुम्हारे मन-मे क्यो इतना द्वेष है, क्यो तुम उनकी हत्या करना चाहते हो! तुम मेरे घनिष्ठ मित्र हो, किन्तु, एक भाई का हृदय मुझे विवश करता है कि मैं इस विषय में तुम्हारी कडी से कडी निन्दा करूँ!

देवदत्त

और एक भाई का हृदय ही मुझे विवश करता है कि मै गौतम बुद्ध से अधिक से अधिक द्वेष करूँ और अपने स्वाभाविक रोष के कारण, अवसर मिलते ही, उनकी हत्या करने का प्रयत्न करूँ। मेरे भी भाई का हृदय है नन्द! मैं यशोधरा का भाई हूँ और अपनी साध्वी पत्नी यशोधरा के साथ अनुचित व्यवहार करके सिद्धार्थ ने मुझे अपना घोर शत्रु बना लिया है। इस शत्रुता में उनकी धर्म और सघ सम्बन्धी मध्यममार्गी नीति और मेरी अतिवादी धार्मिक प्रवृत्ति के कारण और भी वृद्धि होना स्वा-भाविक है।

नन्द

यशोधरा-भाभी के मुख से तो मैने कभी सिद्धार्थ-भैया की कोई आलोचना नही सुनी।

देवदत्त

यह यशोधरा की महत्ता और उदारता है। उनकी इस महत्ता के कारण सिद्धार्थ का अपराध और भी बढ़ जाता है। जो वज्रहृदय व्यक्ति यशोधरा जैसी स्नेहशील और उदारहृदय पत्नी को सोती छोड़कर चल देता है और अपने चिरप्रस्थान के समय उससे सान्त्वना की दो मीठी बातें करते जाने की भी आवश्यकता नहीं समझता, उस निष्ठुर मनुष्य को जीवित रहने का क्या अधिकार है ?

नन्द

फिर वही ! चुप रहो देवदत्त ! तुम यदि मेरे घनिष्ठ मित्र न होते, तो तथागत गौतम बुद्ध के सम्बन्ध में तुम्हारे मुख से ऐसे शब्द सुनकर मैं तुम्हें कभी क्षमा न करता, मैं तुम्हें इसका कठोर दंड देता !

देवदत्त

सुनो नन्द, कान खोलकर सुनो ! यदि तुम मेरे मित्र न होते, तो मैं भी, सिद्धार्थ का पक्ष लेने के कारण, तुम्हे द्वन्द्वयुद्ध के लिए ललकारता !

नन्द

उत्तेजित मत हो देवदत्त ! शान्त हो कर सुनो ! यदि तुम्हें अपनी द्वन्द्वयुद्ध की शक्ति पर इतना अभिमान है और तुम मुझे अपना मित्र मानते हो, तो मैं, एक मित्र के नाते, तुम से एक वचन माँगता हूँ।

देवदत्त

क्या ?

नन्द

यह कि तुम छल, कपट या षड्यन्त्र से गौतम बुद्ध की हत्या करने का कभी यत्न न करोगे। जब कभी तुम्हारे मन में ऐसी दुष्ट इच्छा जाग्रत होगी, तब तुम सिद्धार्थकुमार को द्वन्द्वयुद्ध के लिए ललकारोगे और उन्हे शस्त्र देकर ही उन पर शस्त्र का प्रहार करोगे। यदि तुम उनपर प्रहार करने के लिए अपने पास खड्ग रखना चाहोगे, तो दो खड्ग रखोगे और

यदि धनुप वाण रखना चाहोगे, तो दो धनुप और वाणो से भरे हुए दो तूणीर रखोगे। प्रहार करने के पहले उनमें से एक खड्ग या एक धनुप और एक तूणीर उन्हें दे कर और उन्हें स्पष्ट शब्दो में सावधान करके ही उनसे, सच्चे वीर की भाति, सन्मुख युद्ध करोगे।

देवदत्त

अपनी मित्रता के वदले तुम मुझ से वडी से वडी वस्तु माग सकते हो नन्द, किन्तु, सिद्धार्थ के सम्वन्ध में तुम मुझ से एक शब्द भी न कहो। इससे मेरे हृदय के मर्मस्थल पर चोट पहुँचती है। मै इस विषय मे तुम्हारे अनुरोध की रक्षा न कर सकूगा।

नन्द

मै तुम्हारे हृदय पर चोट पहुँचाना नही चाहता। पर, यह कहे देता हूँ कि मुझे भी तुम्हारे इस घृणित सकल्प से वडी मर्मवेदना हुई है। तुम्हारे दुराग्रह से मेरी व्यथा और भी असह्य हो उठी है। तुम्हारी पुरानी मित्रता के कारण ही मै इस हलाहल विष को पीकर पचाने का प्रयत्न करना चाहता हूँ। अच्छा, अव इस प्रसग को यही समाप्त कर देना चाहिए। तुम मेरे मित्र तो हो ही, इन दिनो मेरे अतिथि भी हो! अतिथि को देव के समान मानना हमारी कुल परम्परा है। मै किसी भी दशा मे इस परम्परा का उल्लघन नही कर सकता।

देवदत्त

तुम्हारे इस अतिथि-प्रेम के लिए मै तुम्हारा हृदय से कृतज्ञ हूँ। तुम्हारा अतिथि होकर मुझे इन दिनो जो सुख मिला है, वह अकथनीय है।

नन्द

प्रशसा करना छोड कर मेरी एक वात सुनो। वहुत दिनो से मै आखेट को न जा सका हूँ। लक्ष्यवेध का अभ्यास छूटा जा रहा है। अहेर के विना तुम्हारा अतिथि-सत्कार भी अधूरा ही रहेगा। यदि तुम भी मेरे साथ चलने को तैयार हो, तो मृगया का प्रवन्ध कराया जाय।

देवदत्त

मृगया मेरे लिए अब विस्मृति का विषय बना चाहती है। धीरे-धीरे अहिंसा धर्म पर मेरा विश्वास बढ़ता जा रहा है। मैं यह समझने में असमर्थ हूँ कि सिद्धार्थकुमार के इतने प्रबल समर्थक होकर भी तुम पशु-पक्षियों की हत्या मे इतनी अधिक रुचि क्यो प्रकट करते हो ?

नन्द

इसलिये कि मै क्षत्रिय हूँ, राजकुमार हूँ, गृहस्थ हूँ; सन्यासी नही, भिक्षु नही, धर्माचार्य नही।

देवदत्त

क्षत्रिय और राजकुमार तो मैं भी हूँ, किन्तु, निरीह पशु-पक्षियो को मनोरंजन या जिह्वा के स्वाद के लिये मारना अपने क्षत्रियत्व और वीरता के लिए अत्यन्त लज्जाजनक समझता हूँ।

नन्द

किन्तु, सम्भवत व्यक्तिगत द्वेष या क्रोध के कारण किसी मनुष्य की हत्या का संकल्प करना तुम्हारी दृष्टि मे प्रथम श्रेणी का क्षत्रियत्व और वीरत्व है।

देवदत्त

तुमने फिर वह प्रसंग छेड दिया। मैं तुमसे फिर प्रार्थना करता हूँ कि तुम सिद्धार्थ के प्रश्न को लेकर मुझसे विवाद करना सदा के लिए छोड दो, अन्यथा, हम दोनो की वह मित्रता, जिसे मैं किसी भी मूल्य पर नष्ट नही होने देना चाहता, समाप्त हुए बिना न रहेगी।

नन्द

अच्छा, अब भविष्य मे ऐसा न होगा। पर, मेरी प्रार्थना मानकर मृगया के लिए चलना तो स्वीकार कर ही लो। एक बार की मृगया ही से तुम्हारा अहिंसा का संकल्प न टूट जायगा।

देवदत्त

क्या तुम मृगया के आग्रह के बन्धन से मुझे मुक्त नहीं कर सकते ? इस विषय में मुझे क्षमा करो भाई !

नन्द

अच्छा, तो फिर यशोधरा भाभी की ओर चलो ! कितनी अच्छी है मेरी भाभी ! चल कर उन्ही से बातचीत करेंगे ।

देवदत्त

क्या तुम्हारे पास केवल दो ही मार्ग है ? यदि मृगया को जाना अस्वीकार करूँ, तो यशोधरा बहन के सामने जाना पड़ेगा ? अच्छा, तो फिर मृगया ही को चलो ! यशोधरा के सामने जाने में मुझे बड़ा दुःख होता है । जब-जब वह मेरे सामने आती है, मेरे हृदय पर गहरा आघात पहुँचता है । मेरी बहन यशोधरा ससार की एक सब से अधिक दुखी नारी है और सब से बुरी बात यह है कि उसका आत्मसयम उसे रो-रोकर अपना दुख हल्का करने की भी अनुमति नही देता । उसके सामने जाते ही दुख से मेरी छाती फटने लगती है । यशोधरा के पास जाने से अच्छा तो यह है कि मैं जगल में जाकर पागल की भाति पशु-पक्षियो की हत्या करता फिरूँ ! अच्छा, चलो, नन्द, मृगया को चलो, मृगया ही को चलो ! और कोई मार्ग ही नही है !

[पट = परिवर्तन]

तीसरा दृश्य

[कपिलवस्तु । कुम्भक का वासस्थान । प्रातः काल ।]

[कुम्भक तथा कुण्डेश्वरी बैठे
बातचीत कर रहे हैं ।]

कुम्भक

आयु के साथ-साथ तुम्हारी नासमझी भी बढ़ती जा रही है । अपनी बुद्धि की प्रतिष्ठा नष्ट होने की तुम्हें तिल भर भी चिन्ता नहीं है । तुम कभी यह भी नहीं सोचती कि तुम मुझ जैसे अत्यन्त बुद्धिमान पुरोहित, सुप्रसिद्ध याज्ञिक और महान कर्मकांडी पण्डित कुम्भकाचार्य शर्मा मध्यम-मार्गी की धर्मपत्नी श्रीमती कुंडेश्वरी देवी हो ! तुम अनेक बार ऐसी भयानक भूल कर बैठती हो कि

कुण्डेश्वरी

ऐसा क्या कर दिया मैंने ?

कुम्भक

सर्वनाश कर दिया, सर्वनाश ! लड्डुओं का हंडा और सोमरस का घड़ा खुला रह जाने दिया । इससे दो महाभयानक हानियाँ हो गईं ।

कुण्डेश्वरी

महाभयानक हानियाँ !

कुम्भक

हाँ, महाभयानक हानियाँ ! घर-भर के चूहे और बिल्लियाँ लड्डू खा-खाकर मोटे और सोमरस पी-पीकर मतवाले हो गए हैं । दोनों आपस का युग-युग का सारा विरोध छोड़कर मेरे शत्रु हो गए हैं । मेरे घर-भर में उन्होंने आजकल, मिल-जुलकर, ऐसी भीषण धमाचौकड़ी मचा रखी है कि उसके आगे बड़े-बड़े उपद्रव बड़े-बड़े विप्लव और बड़ी-बड़ी राज्य-क्रांतियाँ फीकी पड़ गई हैं ।

कुण्डेश्वरी

और दूसरी भयानक हानि ?

कुम्भक

भयानक नहीं, महाभयानक कहो ! दूसरी महाभयानक हानि यह हुई कि परम प्रिय मोदकों और जीवन-सर्वस्व सोमरस के अभाव में अपने राम का हाथी-सा शरीर धीरे-धीरे सूख-सूखकर केवल भैंसे ही-सा रहा जा रहा है । कितनी बार तुमसे कहा कि 'शरीरमाद्य खलु धर्मसाधनम्' अर्थात् शरीर ही खलों के धर्म का पहला साधन है अरे, अरे भूल हो गई ! खलु अर्थात् खलों का नहीं, खलु अर्थात् वास्तव में, वास्तव में, वास्तव में । हां, तो मेरा आशय यह था कि शरीर ही वास्तव में धर्म का पहला साधन

हैं। मैंने तुमसे कितनी बार कहा कि मेरे प्यारे शरीर के विकास के मार्ग में, मेरे खाने-पीने के कार्यक्रम मे कभी कोई बाधा न पड़ने दिया करो।

कुण्डेश्वरी

ऐसी क्या बाधा पड़ गई ?

कुम्भक

साधारण बाधा नही, महाभयानक बाधा ? मैं कह तो चुका कि तुमने अपनी असावधानी से घर के चिर सचित मोदक और सँभाल-सँभाल कर रखा गया सारा सोमरस चूहे-बिल्लियो से चट करा दिया। उन्ही दोनो के सहारे तो मेरा यह शरीर दिन-दूना और रात-चौगुना विकसित हो रहा था। अब तो यह उनके विरह में धीरे-धीरे सूखता जा रहा है। हाय, अब मेरा व्यवसाय कैसे चलेगा ?

कुण्डेश्वरी

क्यो ? व्यवसाय क्यो नही चलेगा ?

कुम्भक

अरी नासमझ, आजकल के यजमान उसी याज्ञिक को यज्ञ कराने को बुलाते है, जिसका शरीर सबसे मोटा होता है। इस युग मे मुटापा ही पाण्डित्य का मुख्य चिह्न समझा जाता है, पाण्डित्य धर्म का साधन और धर्म ही धधे का मूलाधार। अरी भद्रा, तुमने मेरा सारा धधा चौपट कर दिया ! आजकल मुझे निमत्रण बहुत ही कम मिल रहे हैं। अब यह नौ लडको और सात लडकियो की विराट् गृहस्थी कैसे चलेगी ? मेरा तो रोने को जी चाहता है, रोने को ! अपने युग का सबसे महान् कर्मकाण्डी कुम्भक शर्मा तुम्हारी असावधानी से धूल मे मिला चाहता है ! हाय, अब क्या होगा ?

कुण्डेश्वरी

अच्छे पुरुष हुए हो तुम ! पुरुषार्थ के बदले रुदन का पल्ला पकडना चाहते हो !

कुम्भक

अरी भद्रा, रोऊँ नही, तो क्या करूँ ? अभी मैं जीवन के पिछले एक झटके से तो सँभला ही न था कि यह दूसरा नया झटका आ गया। पहले झटके को तोड निकालने मे मेरे तीस दिन घुल गए थे, पूरे तीस दिन ! तब कही जाकर बिगडता हुआ खेल फिर से बना था। बात यह हुई थी कि उस दिन अचानक मेरे एक मुख्य यजमान महाराज शुद्धोदन ने मुझसे कह दिया था कि अब आप यज्ञ कराने न आया करे, यज्ञ मे पशु-बलि की प्रथा है और राजकुमार सिद्धार्थ के परिव्राजक होकर अहिंसा का आग्रह करने के कारण हमारी रुचि अब पशुबलि मे बिलकुल नही रही है। और कोई होता तो निराश होकर बैठ रहता, किन्तु, मालूम है, अपने राम नें क्या किया ?

कुण्डेश्वरी

क्या ?

कुम्भक

पूरे तीस दिन तक इतने वेग से चिन्तन की धुरी पर मस्तिष्क के चक्र को दौडाया कि इस पहाड-से शरीर से पसीने की धारें छूटने लगी। अन्त मे समस्या का समाधान सूझ ही तो गया। हमने झट महाराज शुद्धोदन से जाकर कह दिया कि कर्मकाण्ड और यज्ञ वशपरम्परागत है, वे किसी भी प्रकार बन्द नही किए जा सकते और यज्ञ में पशुबलि की प्रथा भी सनातन है, उसे भी नही मिटाया जा सकता। सारे आयोजन पहले के भाँति ही चलेंगे, केवल इतना अन्तर होगा कि रक्त-मास के पशुओ के बदले पशुओं की आटे की पूरे आकार की मूर्तियाँ बनवाकर उनकी बलि दी जाया करेगी। इससे पूर्वजो की प्रथा भी न मिटेगी और सिद्धार्थकुमार का अहिंसा का सिद्धान्त भी बना रहेगा।

कुण्डेश्वरी

फिर क्या हुआ ?

कुम्भक

और क्या होता ? हमारी इस मध्यममार्गी व्यवस्था से महाराज शुद्धोदन और उनकी सारी राजसभा गद्गद हो गई। हमारे लिए सौ-सौ कण्ठो से 'धन्य, धन्य' की ध्वनि निकल पडी। उसी समय हमारी पूरी उपाधि 'श्रीमान् पण्डित कुम्भकाचार्य शर्मा मध्यममार्गी' स्वीकार की गई। हमारा याज्ञिक का, पुरोहित का वशपरपरागत व्यवसाय नष्ट होते-होते बच गया। अरी भद्रा, अब दूसरा सकट तुमने उत्पन्न कर दिया है।

कुण्डेश्वरी

मुझे दोप देना तो तुम्हारा स्वभाव ही बन गया है।

कुम्भक

मै झूठा दोष नही दे रहा। पुरोहित का व्यवसाय तभी तक चल सकता है, जब तक उसका व्यक्तित्व प्रभावशाली हो। मोटा शरीर और सूक्ष्म बुद्धि, इन्ही दो पहियो के सहारे प्रभाव की गाडी चलती है। तुमने इनमे से एक को चकनाचूर करने का यत्न किया है। अब केवल एक पहिये के सहारे व्यवसाय की गाडी कैसे चलेगी ? दुबले, पतले पुरोहित को कोई नही पूछता, कोई नही बुलाता। स्थूल शरीर ही का यजमान पर प्रभाव पडता है। हाय, अब मेरा व्यवसाय कैसे चलेगा ?

कुण्डेश्वरी

अपनी सूक्ष्म बुद्धि का भी तो तुम्हें बडा अभिमान है। फिर, निकालो कोई अच्छा मार्ग।

कुम्भक

झूठा अभिमान नही है मुझे! नई-नई तिकडमे खोज निकालने मे मेरी सूक्ष्म बुद्धि की बराबरी कर सकने वाले ससार में बहुत कम निकलेगे। यौवन मे प्रवेश करने के पहले मै केवल कुम्भक बटुक कहलाता था। अपनी सूक्ष्म बुद्धि के सहारे ही धीरे-धीरे कहलाने लगा कुम्भकाचार्य शर्मा और इसी

के बल पर एक दिन बन गया श्रीमान् पण्डित कुम्भकाचार्य शर्मा मध्यम-मार्गी, । बलिप्रधान, कर्मकाण्ड और शुद्ध अहिंसा दोनों को एक साथ निभाना सिंह और गाय को एक घाट पर पानी पिलाना है । मुझे छोडकर और किसमें ऐसी प्रतिभा हो सकती थी कि संसार का यह अद्भुत चमत्कार करके दिखलाता ।

कुण्डेश्वरी

ऐसा ही कोई चमत्कार इस बार और करके दिखलाओ, तब जानूं !

कुम्भक

यदि दिखलाऊँगा नही तो सुरसा के मुख की भाति बढते जाने वाले परिवार को क्या खिलाऊँगा ? अच्छा, एक काम करो !

कुण्डेश्वरी

क्या ?

कुम्भक

मुझे उठाकर सुला दो । नगर मे यह समाचार फैलवा दो कि मुझ पर किसी रोग ने आक्रमण किया है । घर मे लड्डुओ और सोमरस के सचय का फिर से प्रबन्ध करो । कुछ दिनो तक मुझे खुले हाथ से खिलाने-पिलाने की व्यवस्था करो और इतने गुप्त रूप से करो कि किसी को पता न चले । जिस समय लोग सहानुभूति प्रकट करने आवें, उस समय रोग का अभिनय मैं करूँ और रुदन का अभिनय तुम करो और जब वे चले जायें, तब भीतर से किवाड बन्द करके मुझे भरपेट मोदक खिलाओ । ऊपर से छककर सोमरस पीने दो !

कुण्डेश्वरी

इससे क्या होगा ?

कुम्भक

इससे क्रमश क्रान्ति होगी । कुछ ही दिनो की इस नीरव साधना से यह शरीर फिर पहले की भांति मोटा हो जायगा । तब राजसभा और

यज्ञवेदी मेरी हुंकार से फिर गूँजने लगेगी और मैं अपने प्रभाव और व्यवसाय की उत्तरोत्तर उन्नति फिर करने लगूँगा।

कुण्डेश्वरी

हो तो तुम बुद्धिमान्!

[पटाक्षेप]

दूसरा अंक

पहला दृश्य

[कपिलवस्तु की सीमा से लगा हुआ वन। दिन का तीसरा पहर।]

[मृगया की वेशभूषा तथा सज्जा में नन्द और सुन्दरिका वार्तालाप करते हुए प्रवेश करते हैं।]

नन्द

कभी-कभी संयोगवश किसी विचित्र स्थान पर विभिन्न स्थितियों के व्यक्ति एक-दूसरे के साथ हो जाते हैं। आज भी ऐसा ही हुआ है। अचानक इस निर्जन वन में आपका और मेरा साथ हो गया और यह अपरिचितों का साथ है। यदि आपको कोई आपत्ति न हो तो कृपया मुझे एक बात जानने का अवसर दीजिए।

सुन्दरिका

क्या?

नन्द

आपका शुभ नाम क्या है ?

सुन्दरिका

नाम बताने में किसी को क्या आपत्ति हो सकती है ? मेरा नाम सुन्दरिका है ।

नन्द

सुन्दरिका ! राजकुमारी सुन्दरिका !

सुन्दरिका

क्या मनुष्य होना परियाप्त नही है ? क्या राजकुमारी होने का कोई विशेष महत्व है ?

नन्द

क्षमा कीजिये ! पूरे परिचय के लिए मेरे मुंह से 'राजकुमारी' शब्द निकल गया !

सुन्दरिका

आपने तो मेरा पूरा परिचय पा लिया । पर, मुझे तो अभी तक आप का अधूरा परिचय भी नही मिला । क्या आपको अपना शुभ नाम बताने में कोई आपत्ति है ?

नन्द

नही तो ! मुझे आपत्ति क्यो होने लगी ! मेरा नाम नन्द है ।

सुन्दरिका

नन्द ! महाराज शुद्धोदन के पुत्र, राजकुमार नन्द !

नन्द

क्या मनुष्य होना परियाप्त नही है ? क्या 'महाराज शुद्धोदन के पुत्र, राजकुमार' होने का विशेष महत्व है ?

सुन्दरिका

क्षमा कीजिए ! मुझसे भी वही भूल हो गई। पूरे परिचय के लिए मेरे मुँह से वे शब्द निकल गए।

नन्द

पर, पूरा परिचय तो अभी बहुत दूर है। मनुष्य के पूरे जीवन में भी किसी को उसका पूरा परिचय नही मिल पाता।

सुन्दरिका

हम लोग बहुत चल चुके ! अब तो आप थक गए होंगे !

नन्द

मैं थका तो नही हूँ। पर, इसमे कोई सन्देह नही कि हम बहुत चल चुके हैं। कुछ देर विश्राम कर लेने मे कोई हानि नही। विश्राम के लिए यह स्थान बुरा भी नही है।

सुन्दरिका

बुरा क्यो होने लगा ! मुझे तो यह स्थान अच्छा ही लग रहा है।

[दोनो बैठकर बातचीत करने लगते हैं।]

नन्द

मैं जब मृगया के लिए इस वन में आया, तब मुझे यह कल्पना न थी कि आप जैसी कोई राजकुमारी भी आखेट के लिए इसी वन मे आई होगी।

सुन्दरिका

मृगया पर तो राजकुमारो ही का अधिकार है न, कोई कुमारी आखेट के लिए वन में आने की धृष्टता कर ही कैसे सकती है ?

नन्द

क्षमा कीजिए ! मेरा आशय यह नही था कि कुमारो और कुमारियो के-

अधिकारों में अन्तर होना चाहिए। मैं तो अपना एक स्वाभाविक आश्चर्य प्रकट कर रहा था। उससे भी बढ़कर एक आश्चर्य मुझे और हुआ ?

सुन्दरिका

वह क्या ?

नन्द

मैंने आप के अद्भुत साहस, शक्ति और वीरता का परिचय पाया। पहले ही बाण से सिंह को मार गिराना आप ही का काम था। आप जैसी वीरांगना भारत के लिये वास्तव में गौरवस्वरूपा हो सकती है।

सुन्दरिका

इतना बड़ा असत्य बोलना आपको शोभा नहीं देता। मेरा बाण लगने से पहले ही आप का खड्ग उस सिंह के दो टुकड़े कर चुका था। मुझे आश्चर्य है कि आप खड्ग के पहले ही प्रहार से सिंह को कैसे मार सके! इतना साहस, इतनी शक्ति और इतनी वीरता तो मैंने इसके पहले किसी पुरुष में नहीं देखी।

नन्द

इस प्रश्न पर झगड़ा करने के पहले हमें समझौते का मार्ग अपनाना चाहिए। लीजिए, मैंने समझौते का उपाय सोच लिया।

सुन्दरिका

क्या ?

नन्द

हम दोनों को एक मत होकर यह स्वीकार कर लेना चाहिए कि हमें एक-दूसरे के इस वन में होने की कोई कल्पना न थी। अचानक सिंह मेरे पास आ गया। मृगया में मेरे तूणीर के सारे बाण उसके पहले ही समाप्त हो चुके थे। इसलिए, मुझे सिंह पर अपने खड्ग से प्रहार करना पड़ा।

उधर आप सिंह का पीछा करती हुई आ रही थी। मेरे खड्ग के साथ ही आपका बाण भी सिंह के शरीर को वेधकर एक ओर से दूसरी ओर निकल गया।

सुन्दरिका

पर, सिंह मरा तो आप ही के खड्ग के प्रहार से।

नन्द

नहीं, दोनों का सम्मिलित प्रहार एक साथ होने से मरा।

सुन्दरिका

यह तो आप केवल समझौते के लिए कह रहे हैं।

नन्द

जीवन और संसार में समझौते का बहुत बड़ा महत्व है। जिसे इस जगत् में जीवन-भर अकेला रहना हो, वही समझौते की सत्ता को अस्वीकार कर सकता है।

सुन्दरिका

मुझे रह-रह कर यह विचार दुखी कर रहा है कि आज की इस मृगया में मेरी सखी माधविका मुझसे बिछुड़ गई है।

नन्द

मैं भी खिन्न हूँ कि मेरे मित्र देवदत्त आज के आखेट में मुझसे अलग हो गए हैं। पर, चिंता करने से तो कोई लाभ नहीं। कुछ देर यहीं ठहरना चाहिए। सम्भव है, दिन छिपने के पहले दोनों ढूँढते-ढूँढते यहीं आ पहुँचें। अच्छा, यह तो बताइए कि मृगया की ओर आपकी रुचि कैसे हुई?

सुन्दरिका

मेरे पिताजी आखेट के बिना एक दिन भी नहीं रह सकते थे। उनका मुझपर स्नेह भी बहुत था। जब-जब वह मृगया के लिए निकलते,

मैं उनके साथ जाने का हठ करती । विवश होकर उन्होंने मुझे मृगया का अभ्यास कराया और वह प्रतिदिन मुझे अपने साथ आखेट को ले जाने लगे ।

नन्द

पर, आज तो आपके पिताजी आपके साथ नही आए ।

सुन्दरिका

बहुत दिनो से वह आखेट न करने का व्रत ले चुके है ।

नन्द

क्यो ?

सुन्दरिका

तथागत गौतम बुद्ध के प्रवचनो का उनपर गहरा प्रभाव पड़ा है ।

नन्द

तथागत की महिमा ऐसी ही है । उनके सम्पर्क में जो कोई आता है, वह उनका अनुयायी बन जाता है । आपके पिताजी भी मेरे पिताजी ही के मार्ग पर आ गए है ।

सुन्दरिका

क्यो ? क्या महाराज शुद्धोदन ने भी मृगया का परित्याग कर दिया है ?

नन्द

हाँ, बहुत दिनो से । वह तो मुझे भी रोकना चाहते थे, पर, मैंने उनसे क्षमाप्रार्थना कर ली । मुझसे तो मृगया के बिना नही रहा जाता ।

सुन्दरिका

मेरी भी यही दशा है । पिताजी ने मुझसे स्पष्ट शब्दो में कह दिया कि मैं मृगया के लिए जाना बन्द कर दूँ । बहुत प्रार्थना करने पर इस प्रतिबन्ध के साथ अनुमति दी कि मैं बहुत ही थोड़ी सख्या मे पशुओ का सहार करूँ और वह भी केवल हिंस्र पशुओ का ।

नन्द

हम दोनों की एक ही सी स्थिति है। मुझपर भी यही प्रतिबन्ध लगा दिया गया है। इसका एक फल यह हुआ है कि शाकाहारी बन जाना पड़ा है। वन में मृगया के लिए आने पर केवल वन्य फलों ही पर निर्भर रहना पड़ता है। आज भी मेरे पास केवल कुछ फल ही हैं। मृगया में परिश्रम के कारण भूख अधिक लगती है। समय भी बहुत अधिक हो चुका है। यदि अनुमति दें, तो कुछ फल आपको भी अर्पित करूँ।

सुन्दरिका

अब मेरी थकान उतर चुकी है और मैं जाना चाहती हूँ। अब तो घर पहुँचकर ही भोजन करूँगी।

नन्द

क्या अपनी सहेली की प्रतीक्षा न कीजिएगा? देखिए, वन-की मृगया का साथी कठिन समय और कठिन स्थान का साथी होता है, उससे इतना अधिक सकोच करना उचित नहीं होता। आपको मेरी यह तुच्छ भेंट स्वीकार करनी चाहिए।

[नन्द अपने वस्त्रों में से कुछ फल निकालकर सुन्दरिका के सामने रखते हैं। सुन्दरिका सकुचाती हुई उनमें से एक फल लेती है।]

सुन्दरिका

आप भी तो खाइए! क्या अधिक श्रम मैंने ही किया है, आपने नहीं? क्या अधिक समय मेरे ही लिए हुआ है, आपके लिए नहीं?

[नन्द एक फल लेकर खाने लगते हैं। सुन्दरिका भी एक फल खाती है।]

नन्द

वन-भोजन इन्द्रपुरी के पकवानो से भी मधुर होता है । और जब दो व्यक्ति मिलकर वन-भोजन करते हैं, तब तो उसकी मधुरता दूनी हो जाती है ।

सुन्दरिका

यदि हम दोनो के बिछुड़े हुए दोनो साथी और आ मिलते, तो यह मधुरता चौगुनी हो जाती । मेरी सम्मति में, आधार के लिए एक-एक फल खाना ही पर्याप्त होगा । शेष फल उन लोगो की प्रतीक्षा मे रख देना उचित होगा !

नन्द

मै भी इस विषय मे आपसे सहमत हूँ । मुझे अपने विषय में भी आप से एक बात और कहनी है। बड़ा सकोच हो रहा है कहने में, पर, यदि आप अनुमति दे, तो मै इस समय आपसे वह बात कह देना चाहता हूँ । उसपर मेरा जीवन निर्भर है । वह एक ऐसी बात है कि यदि जीवन मे उसे कभी कहना ही हो, तो उसके लिए आजके इस अवसर से अच्छा अवसर कभी नही मिल सकता ।

सुन्दरिका

ऐसी क्या बात है ? कहिए ! सकोच की क्या आवश्यकता है !

नन्द

संकोच तो होता ही है, बहुत सकोच होता है, ऐसे विषय में संकोच होना स्वाभाविक भी है । पर, बात कहना भी आवश्यक है । बात यह है कि मैंने अपने पिताजी से सुना था कि आपके पिताजी आप जैसे नारीरत्न के योग्य मुझ अकिंचन को समझ कर, मुझे जीवन का महान् सौभाग्य देना चाहते हैं ।

सुन्दरिका

मैंने भी अपने पिताजी से सुना था कि आपक पिताजी मुझे आपके लिए............

नन्द

विवाह के सम्बन्ध में गुरुजनों के सन्देश तो एक-दूसरे तक पहले ही पहुँच चुके हैं। आज मुझे भी अनायास यह सौभाग्य मिल गया है कि मैं स्वयं आप तक अपनी प्रार्थना पहुँचा सकूँ।

सुन्दरिका

स्वच्छ हृदय से विवाह का प्रस्ताव करने में कोई बुराई नहीं होती। विवाह के सम्बन्ध में प्रस्ताव करने में जो सकोच होता है, उसे मैं व्यर्थ समझती हूँ। आपने अपने मन की बात मुझसे कह दी, इसके लिए मैं आपको धन्यवाद देती हूँ। पर, मैं आपको जता देना चाहती हूँ कि यह सम्भव नहीं है। इस बात को आगे बढाने मे कोई लाभ नहीं। क्षमा कीजिए, अब मैं जाती हूँ। समय बहुत हो गया। यदि माधविका आपको कहीं मिल जाय, तो कृपया उसे सीधी मेरे घर पर जाने को कह दीजिएगा।

नन्द

ठहरिए, कुछ तो और ठहरिए। आपके इस व्यवहार को, इस उपेक्षा-को मैं समझ नहीं पा रहा हूँ। मुझमे आपको ऐसा क्या दोष दिखाई दिया कि आप मेरी प्रार्थना को इस प्रकार अस्वीकार कर रही हैं।

सुन्दरिका

स्पष्ट कथन के लिए क्षमा कीजिए। आप उसी शाक्य वंश के राज-कुमार हैं, जिसके युवराज सिद्धार्थकुमार निरपराध महादेवी यशोधरा को छोडकर जा चुके हैं और जिसके महाराज शुद्धोदन अपनी धर्मपत्नी पुण्यशीला प्रजावतीदेवी का परित्याग कर प्रव्रज्या ग्रहण करने का विचार कर रहे हैं।

नन्द

क्या यही तुम्हारा न्याय है सुन्दरिका! क्या केवल एक कुल में जन्म लेने ही से सब व्यक्ति एक से हो जाते हैं? बहुत दिनों से मैं तुम्हारे गुणों-की प्रशंसा सुनता आ रहा था और मन-ही-मन तुम्हें सहधर्मिणी के रूप में

पाने की आशा लगाए बैठा था। जब पिताजी का भी समर्थन मिल गया और यह भी ज्ञात हो गया कि तुम्हारे पिता जी भी उनसे सहमत है, तब मेरी आशालता लहलहा उठी। आज जब अचानक संयोग ने यहाँ तुम्हारे दर्शन का सौभाग्य मुझे प्राप्त करा दिया, तब मुझे विश्वास हो गया था कि तुम भी मेरा प्रस्ताव स्वीकार कर लोगी, पर, तुमने तो मुझपर एक ऐसा लाछन लगा दिया, जिसके उत्तरदायित्व से मेरा कोई सम्बन्ध नही।

सुन्दरिका

मैने भी तुम्हारी वीरता और गुणो की चर्चा बहुत सुनी थी। गुरुजनो की सहमति से मुझे भी सन्तोष हुआ था। तुम्हारा अचानक यहा दर्शन देना और विवाह का प्रस्ताव करना मुझे अपना बहुत बडा सौभाग्य प्रतीत हुआ था। पर, क्या करूँ? विवश हूँ! तुम्हारे कुल की परपरा के कारण तुमपर विश्वास नही हो रहा। दूध से जल जाने पर छाछ को फूँककर पिया जाता है।

नन्द

व्यर्थ के सन्देह को हृदय में स्थान दे कर मेरे जीवन को निरर्थक न बनाओ सुन्दरिका! प्रव्रज्या ग्रहण करने की मेरे कुल की परम्परा महापुरुषो के लिए है। पूज्यपाद पिताजी तथा महामान्य गौतम बुद्ध ही उसके योग्य हो सकते है। मै तो एक सामान्य मनुष्य हूँ। महापुरुषो का मार्ग मेरा मार्ग नही है। मेरा मार्ग तो वही है, जो सामान्य मनुष्यो का होता है और मुझे अपनी लघुता पर अभिमान भी है। मै तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि मै जीवनभर तुम्हारा साथ न छोड़ूँगा।

सुन्दरिका

क्या तुम वचन दे सकते हो, शपथ ग्रहण कर सकते हो?

नन्द

अवश्य! हृदय की सारी पवित्रता के साथ मै तुम्हें वचन दे सकता हूँ, शपथ ले सकता हूँ कि मै तुम्हारा साथ कभी न छोड़ूँगा!

सुन्दरिका

अच्छा, शपथ लो कि जीवन मे कभी मेरा साथ न छोडोगे, कभी भिक्षु न वनोगे और कभी इस शपथ का उल्लघन न करोगे ।

नन्द

मै नन्द शुद्ध हृदय से शपथपूर्वक विश्वास दिलाता हूँ कि मै तुम्हें सदा निष्कपट भाव से प्रेम करूँगा, कभी तुम्हारा साथ न छोडूँगा, कभी भिक्षु न बनूँगा और सदा अपने इस वचन को पूरी दृढता के साथ निभाऊँगा ।

सुन्दरिका

मुझे तुम्हारी प्रतिज्ञा से सन्तोष हुआ, अव मै भी प्रतिज्ञा करती हूँ । मै सुन्दरिका शपथपूर्वक वचन देती हूँ कि जीवनभर अनन्य भाव से अपना प्रेम और सेवा तुम्हें समर्पित करूँगी, कभी तुम्हारा साथ न छोडूँगी और कभी अपना यह वचन भंग न करूँगी ।

[एक ओर से मृगया की वेशभूषा और सज्जा में माधविका का प्रवेश ।]

माधविका

किसे वचन दे रही हो सुन्दरिका ? क्या वचन दे रही हो ?

सुन्दरिका

यह राजकुमार गौतम नन्द हैं माधविका !

माधविका

गौतम नन्द ! इन्हे वचन दे रही हो ! वडी भोली हो तुम ! शाक्य वंश के राजकुमार वड़े चतुर होते है ! भोली राजकुमारी और चतुर राजकुमार में हुआ अनुवन्ध तव तक मान्य नही हो सकता, जव तक किसी समझदार सहेली की सम्मति न ले ली गई हो !

सुन्दरिका

तुम तो ऐसी बिछुडी, माधविका, कि पता ही न चला। तुम्हारे आने से बडी प्रसन्नता हो रही है! कितनी देर से हम दोनो तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे थे!

माधविका

अभी से एक के बदले दो की भाषा बोलने लगी! तुम भले ही प्रतीक्षा कर रही हो, राजकुमार गौतम नन्द को क्या पड़ी थी कि मेरी प्रतीक्षा करते!

नन्द

आते ही आप मुझपर अकारण रोष क्यों प्रकट करने लगी? मैंने ऐसा कौन-सा अपराध किया है?

माधविका

अपराध? आपका कुल नारी की अवहेलना का प्रसिद्ध अपराधी है।

नन्द

अब उस प्रश्न को न उठाइए। उसपर बहुत विवाद हो चुका है और मैंने शपथपूर्वक प्रतिज्ञा की है कि मैं कभी इनका साथ न छोडूँगा, कभी भिक्षु न बनूँगा, कभी सन्यास न लूँगा।

माधविका

और इन्होने आपकी प्रतिज्ञा पर विश्वास कर लिया?

नन्द

यह तो इन्हीसे पूछिए।

माधविका

क्यो सखी?

सुन्दरिका

मुझे इनपर पहले से विश्वास था सखी, क्योंकि अपने-आप पर विश्वास था। इस विषय में अपने आत्म-विश्वास की बात मैं तुमसे पहले ही कह चुकी थी। फिर भी, परीक्षा के रूप में प्रव्रज्या के प्रश्न को छेड़कर मैं इनसे अभी-अभी वचन ले चुकी हूँ। अब इनके और मेरे बीच कोई अन्तर नहीं रह गया है।

माधविका

तब तो वास्तव में बड़ी प्रसन्नता की बात है। अब तो यह सोचना पड़ेगा कि इस मंगलमय अवसर पर हार्दिक प्रसन्नता प्रकट करने का क्या उपाय किया जाय।

नन्द

वास्तव में इससे बढ़कर प्रसन्नता का क्या अवसर हो सकता है। दो हृदयों का सदा के लिए एक दूसरे के ममत्व के बंधन में बँधने का निश्चय करना जीवन की सबसे अधिक आनन्ददायक और सबसे अधिक महत्वपूर्ण घटना होती है।

[दूसरी ओर से मृगया की वेशभूषा और सज्जा में देवदत्त का प्रवेश]

देवदत्त

कौन किसके ममत्व के बंधन में बँध रहा है? क्या इस वन में किसी का विवाह हो रहा है?

नन्द

आओ भाई देवदत्त! बहुत देर से हम लोग तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे थे। यही वह राजकुमारी सुन्दरिकादेवी हैं, जिनकी चर्चा मैं तुमसे किया करता था और यह इनकी सखी माधविकादेवी! विवाह तो अभी नहीं हुआ, पर, मैं और सुन्दरिका परस्पर वचनबद्ध अवश्य हो चुके हैं।

देवदत्त

बड़ी प्रसन्नता का विषय है। हार्दिक बधाई स्वीकार कीजिए। और मिठाई ?

नन्द

इस निर्जन वन मे मिठाई कहाँ से खिलाई जा सकती है ! कुछ वन्य फल मेरे पास बचे है, कुछ तुम्हारे पास भी अवश्य होगे। उन्ही सबको एकत्र कर, प्रीतिभोज के रूप में, एक संमिलित वनभोजन कर लिया जाय !

माधविका

हम लोगो को बड़े सस्ते में निबटा देना चाहते है राजकुमार ! मै तो पहले ही कह चुकी हूँ कि शाक्यवंश के राजपुत्र बड़े चतुर होते है !

सुन्दरिका

और इस वन मे संभव भी क्या है माधविका? सोचो तो सही।

माधविका

तुम तो अभी से राजकुमार नन्द का पक्ष लेने लगी सुन्दरिका !

देवदत्त

विवाद की आवश्यकता नही। प्रीतिभोज का प्राण है श्रद्धा और स्नेह। साधन तो गौण ही होते है। जो कुछ संभव हो, वही आदर और प्रेम के साथ स्वीकार किया जाना चाहिए।

[नन्द और देवदत्त अपने-अपने पास के वन्य फल निकालकर रखते हैं। चारों फल खाते है।]

माधविका

अच्छा, अब स्वयंवर और विवाह कब होगा ?

सुन्दरिका

स्वयंवर तो हो चुका।

माधविका

हो चुका! कब?

सुन्दरिका

अभी, कुछ पहले!

माधविका

कैसे?

सुन्दरिका

स्वयंवर का आशय शक्ति और वीरता का प्रदर्शन ही तो होता है, राजकुमार नन्द वह प्रदर्शन अच्छे रूप में कर चुके हैं।

माधविका

कर चुके हैं! किस रूप में?

सुन्दरिका

अभी इसी वन में इन्होंने अकेले ही अपने खड्ग के एक प्रहार से भयानक सिंह के दो टुकडे कर दिए थे!

नन्द

राजकुमारी सुन्दरिका स्त्री और पुरुष की असमानता की बडी विरोधिनी है। इन्हें एक पक्ष का स्वयंवर सहन न हुआ। पुरुष के साथ-साथ स्त्री के वीरता-प्रदर्शन को भी इन्होंने स्वयंवर का एक अंग समझा। इनका एक ही बाण उस सिंह के शरीर को वेधकर निकल गया। इस प्रकार इन्होंने अपनी परीक्षा दे दी!

माधविका

अच्छा, तो हम लोगों के आने के पहले यहाँ बहुत कुछ हो चुका है

सुन्दरिका

अच्छा होता सखी, यदि तुम भी उस समय उस स्थान पर होती और अपनी आँखो से कुमार नन्द को खड्ग के एक ही प्रहार से सिंह के दो टुकडे करते देख लेती । कितना ओजस्वी था वह दृश्य !

माधविका

अच्छा, स्वयंवर तो हो गया ; अब आप दोनो अपने शुभ विवाह का दृश्य कब दिखाएँगे ?

सुन्दरिका

विवाह यदि दो आत्माओ की एकता की प्रतिज्ञा का नाम है, तब तो वह भी हो चुका है । विवाह यदि गुरुजनो के आशीर्वाद की छाया में कुटुम्बियों और इष्टमित्रो की उपस्थिति में होने वाला उत्सव-आयोजन है, तो उसकी तिथि गुरुजन ही निश्चित करेंगे ।

देवदत्त

तब क्या हम लोग यह मान लें कि आप लोगो का वास्तविक विवाह तो वन-देवता के आशीर्वाद की छाया मे इस विराट् वन के आँगन में हो ही चुका है । केवल औपचारिक आयोजन होना शेष है ?

नन्द

सत्य तो यही है ।

माधविका

तब तो आज की इस सध्या को हमें अधिक से अधिक आनन्दमय बनाने का यत्न करना चाहिए ।

देवदत्त

वन्य फलो के प्रीतिभोज की मधुरता ने इसे बहुत कुछ आनन्दप्रद बना ही दिया है ।

सुन्दरिका

इसमें एक आयोजन की वृद्धि और की जा सकती है, अनायास की जा सकती है।

नन्द

वह क्या ?

सुन्दरिका

माधविका का स्वाभाविक मधुर कण्ठसंगीत !

माधविका

यह तो तुम्हारा अन्याय है सुन्दरिका ! तुम्हें मालूम है कि तुम्हारे वीणावादन के अभाव में मैं कदापि नहीं गा सकती !

सुन्दरिका

विशेष अवस्था में विशेष व्यवस्था करनी ही पड़ती है। यहाँ वीणा कहाँ है, जो मैं बजाऊँ। अब तो तुम्हें स्वीकार करना ही पड़ेगा सखी, कि मेरे वाद्यसंगीत से तुम्हारा कण्ठसंगीत अधिक महत्त्वपूर्ण है। मेरा वीणावादन प्रत्येक स्थिति में संभव नहीं हो सकता, किन्तु, तुम्हारा संगीत तो पक्षी के स्वर और निर्झर की गति की भाँति प्रत्येक स्थान पर और प्रत्येक समय पर प्रवाहित हो सकता है। अब देर न करो सखी ! एक गीत सुना दो !

माधविका

[गीत]

प्रेम, तुम्हारी जय जीवन में !
जय कण-कण में,
जय क्षण-क्षण में !
प्रेम, तुम्हारी जय जीवन में !

अनदेखे, अनजाने प्राणी
पल में अपने हो जाते हैं ;
हृदय हृदय में तन्मय होते,
प्राण प्राण में खो जाते हैं !
एक नया मधुमास महकने
लगता है जग के आँगन में !
प्रेम, तुम्हारी जय जीवन में !
जय तन-तन में,
जय मन-मन में !
प्रेम, तुम्हारी जय जीवन में !
जग को तुमने स्वर्ग बनाया,
सुगम बनाया जीवन-पथ को,
वाणी दी उर के युग-युग के
संचित मधुर रहस्य अकथ को !
मानव में मनुजत्व तुम्हीं ने
भरा, अमृत निर्मल यौवन में !
प्रेम, तुम्हारी जय जीवन में !

[५८-परिवर्तन ।]

दूसरा दृश्य

[पाटलिपुत्र। शुद्धोधन का प्रासाद। मध्याह्न।]

[शुद्धोदन तथा प्रजावती बातचीत कर रहे हैं।]

शुद्धोदन

समय को बदलते देर नहीं लगती प्रजावती ! एक दिन था कि लोग मुझसे कहते थे कि महाराज शुद्धोधन, आप बड़े सौभाग्यशाली हैं ! महाराज दशरथ के राज्य के समान विशाल राज्य के आप स्वामी हैं, राम और लक्ष्मण के समान आपके पुत्र सिद्धार्थ और नन्द हैं और कौशल्या और सुमित्रा जैसी आपकी रानियाँ महामाया और प्रजावती हैं ! पर, अचानक समय बदल गया। आज मेरी कैसी बुरी दशा है महारानी ! आज मेरे समान अभागा और कौन होगा ?

प्रजावती

सयम के लिए आप प्रसिद्ध रहे हैं महाराज ! आपका धैर्य विशाल चट्टान के समान रहा है । समय के बुरे से बुरे परिवर्तन के आघात से भी उसे अटूट रहना चाहिए ।

शुद्धोदन

उन महाराज दशरथ की कल्पना करो प्रिये, जिनकी कौशल्या राम-को जन्म देते ही दिवगत हो गई हो और जिनका राम केवल चौदह वर्षों के लिए ही नही, सदा के लिए वन को चला गया हो । महारानी महामाया-के देहान्त और युवराज सिद्धार्थकुमार के प्रव्रज्याग्रहण से मेरी ऐसी ही दशा हो गई है । महाराज दशरथ भाग्यशाली थे कि राम के वनगमन पर देह-के बन्धन से छूट गए थे, मैं भाग्यहीन हूँ कि सिद्धार्थ के वियोग में भी जी रहा हूँ । मेरे धैर्य का आधार टूट गया है ! प्रजावती तुम मुझे कैसे सँभालोगी !

प्रजावती

अपने को आप स्वय सँभालेगे स्वामी ! और किसमे इतनी शक्ति है ? इसमें सदेह नही कि समय परिवर्तनशील है, पर, उसकी अनुकूलता और प्रतिकूलता चक्र की तरह घूमती रहती है । यदि आज हमारा समय हमारे प्रतिकूल है, तो इसका अर्थ यह कदापि नही कि कल वह हमारे अनुकल न होगा ।

शुद्धोदन

अब मैं किसके सहारे आशा का भवन खडा करूँ प्रजावती ?

प्रजावती

आपका पौत्र राहुल आपकी आशा का आधार बन सकता है महाराज !

शुद्धोदन

राहुल अभी बहुत छोटा है ।

प्रजावती

तब आपका पुत्र नन्द है।

शुद्धोदन

हाँ, नन्द अवश्य है! तुमने नन्द को जन्म देकर मुझे एक अच्छा आधार प्रदान किया है। सन्यास लेने के पहले नन्द को राज्य सौंपकर मैं निश्चिन्त तो होना चाहता हूँ, पर, जब तक उसका विवाह न हो जाय, तब तक उसके राज्याभिषेक का आयोजन करना उचित नही प्रतीत होता। मैं सोचता हूँ कि कही ऐसा न हो कि नन्द के मन मे भी अपने भाई सिद्धार्थ के अनुकरण-की इच्छा उत्पन्न हो जाय। यदि ऐसा हुआ, तो फिर राज्य का भार कौन सँभालेगा?

प्रजावती

नन्द के लक्षण तो ऐसे नही दिखाई देते। मैं अपने दोनो बेटो को अच्छी तरह जानती हूँ। मैं जानती हूँ कि नन्द क्या है और सिद्धार्थ क्या है। यदि आप उचित समझें, तो नन्द का विवाह कर सकते हैं। सिद्धार्थ के वियोग तथा आपके संभावित वियोग के कारण मेरा जी भी घर मे नही लग सकता। यशोधरा भी अपने पति के वियोग मे दुखी रहती है। अब इसके अतिरिक्त कोई मार्ग नही रह गया है कि मैं नन्द की बहू को घर सौंप दूँ। मुझे भी अपना कल्याण इसीमें दिखाई देता है कि मैं भी सिद्धार्थ के मार्ग पर चलूँ। बहन महामाया के आकस्मिक देहात-के कारण उनके पुत्र सिद्धार्थ पर मेरी ममता इतनी बढ गई थी कि मैंने उसे अपने पेट के बेटे से भी अधिक प्रेम से पाला था। जबसे सिद्धार्थ मुझे छोडकर गया है, मेरे हृदय मे सदा एक हूक सी उठा करती है।

शुद्धोदन

मुझे धैर्य का उपदेश देने वाली तुम! तुम भी विचलित हो रही हो!

प्रजावती

हम तीनो का दुख एक दूसरे से बढा हुआ है। मुझसे अधिक दुखी

आप और आपसे अधिक दुखी मेरी बहू यशोधरा है । मैं ने बहुत विचार किया है महाराज, और मैं बारबार यह कहना चाहती हूँ कि सिद्धार्थ-के वियोग का दुःख सहने का हम तीनों के पास केवल एक ही उपाय हो सकता है, एक ही मार्ग हो सकता है । हम तीनों को सन्यास ग्रहण कर लेना चाहिए और भिक्षु, भिक्षुणी बनकर एक-दूसरे से अलग हो जाना चाहिए। आप शीघ्र ही नन्द का विवाह करने की अपनी इच्छा पूर्ण कीजिए। आप नन्द को राज्य का और मैं नन्द की बहू को घर का भार सौंपकर अपने प्यारे सिद्धार्थ के मार्ग पर चले जायँ । तभी हम शांति पा सकते हैं और तभी हमारा परस्पर-वियोग भी सह्य हो सकता है । अन्यथा, यहाँ तो हम तीनों तिल-तिल करके सिद्धार्थ के वियोग की ज्वाला में निरन्तर जला करेंगे ।

शुद्धोदन

ठीक कहती हो प्रजावती ! और कोई मार्ग नहीं है । राज्याभिषेक के पहले विवाह अत्यन्त आवश्यक है । तुम्हें ज्ञात है कि मैंने नन्द के विवाह की बात भी चलाई थी । राजकुमारी सुन्दरिका-के पिता भी सहमत हो गए थे । उन्होंने मुझसे स्वयंवर की तिथि सूचित करने का अनुरोध भी किया था । नन्द पहले तो स्वयंवर के लिए प्रस्तुत हो गया था, किन्तु, अभी, उस दिन, जब वह वन से मृगया से लौट कर आया, तब मेरे स्मरण दिलाने पर बोला कि स्वयंवर की आवश्यकता नहीं है । उसकी यह बात मेरी समझ में नहीं आई ।

प्रजावती

इन लड़कों के मन की बात कैसे जानी जा सकती है ? मैं भी कुछ समझ नहीं पा रही हूँ कि मृगया के बाद से नन्द की प्रवृत्ति में अचानक ऐसा परिवर्तन क्यों हो गया । पता लगाने की आवश्यकता है । उस दिन नन्द के साथ आखेट को वन में कौन कौन गए थे ?

शुद्धोदन

नन्द और देवदत्त के अतिरिक्त और तो कोई नहीं गया ।

प्रजावती

यदि कोई रहस्य की बात हो, तो नन्द को स्वयं अपने विचार-परिवर्तन का कारण बताने में संकोच हो सकता है। इसलिए, मेरी प्रार्थना है कि आप देवदत्त को बुलवाकर उनसे इस परिवर्तन का रहस्य जानने का कष्ट करें।

शुद्धोदन

द्वारपाल !

[नेपथ्य में द्वारपाल "आज्ञा महाराज !" कहता है।]

शुद्धोदन

राजकुमार नन्द के मित्र राजकुमार देवदत्त को शीघ्र बुला लाओ !

[नेपथ्य में द्वारपाल "जो आज्ञा !" कहता है।]

प्रजावती

यह कैसी विचित्र बात है कि मृगया के लिए वन में जाने के बाद ही से स्वयंवर के सम्बन्ध में नन्द का पिछला निश्चय अचानक शिथिल हो गया है !

शुद्धोदन

सम्भव है, वन में कोई ऐसी रहस्यपूर्ण घटना हो गई हो, जिससे नन्द का निश्चय अचानक बदल गया हो।

प्रजावती

कारण कुछ भी हो, वर्तमान अनिश्चित स्थिति का शीघ्र ही अन्त होना चाहिए, अन्यथा, हमारा सारा कार्यक्रम बिगड़ जायगा।

शुद्धोदन

इसमे क्या सदेह है !

[देवदत्त का प्रवेश ।]

देवदत्त

प्रणाम महाराज ! वन्दन महारानी !

शुद्धोदन

शतायु हो देवदत्त !

प्रजावती

चिरजीवी हो आयुष्मान् !

शुद्धोदन

क्यो राजकुमार देवदत्त, क्या तुम उस दिन नन्द के साथ मृगया के लिए वन मे गए थे ?

देवदत्त

गया तो था महाराज ! कहिए, क्या आज्ञा है ?

शुद्धोदन

आयुष्मान्, तुमसे मुझे एक अत्यन्त महत्व का रहस्य जानना है ।

देवदत्त

आज्ञा कीजिए महाराज, यदि मुझे कुछ ज्ञात होगा, तो अवश्य सेवा-मे निवेदन करूँगा ।

शुद्धोदन

बात यह है देवदत्त, कि मेरी इच्छा अब निवृत्त होने की है । महारानी प्रजावती भी प्रव्रज्या ग्रहण करना चाहती है । हम लोग राज्यकार्य का भार नन्द पर और गृह-व्यवस्था का भार नन्द की भावी वहू पर डालकर निश्चिन्त होना चाहते है ।

देवदत्त

इसमें रहस्य की क्या बात है महाराज ! यह तो आप दोनों की इच्छा का प्रश्न है ।

शुद्धोदन

हमारी इस इच्छा में बाधा उत्पन्न होती दिखाई दे रही है । इसीलिए तुम्हारी सहायता की आवश्यकता हुई है ।

देवदत्त

मेरे योग्य सेवा मुझे बताइए महाराज !

शुद्धोदन

नन्द का विवाह राजकुमारी सुन्दरिका से करने का हमारा विचार था । आयुष्मान् नन्द भी इससे सहमत था । सुन्दरिका के पिता की अनुमति भी मिल गई थी । उन्होंने स्वयंवर की तिथि निश्चित करानी चाही थी । नन्द इसके लिए भी तत्पर था । पर, उस दिन की मृगया से लौटने के बाद जब तिथि निश्चित करने के प्रश्न पर उसका परामर्श चाहा गया, तब उसने स्वयंवर के लिए जाना अस्वीकार कर दिया ।

देवदत्त

नन्द ने क्या कहा ?

शुद्धोदन

उसने कहा कि स्वयंवर की आवश्यकता नहीं है ।

देवदत्त

आपने इसका अर्थ यह लगाया कि राजकुमार नन्द मृगया के लिए जब वन में गए, तब वहाँ कोई ऐसी रहस्यमय घटना हो गई, जिसके कारण उन्होंने राजकुमारी सुन्दरिका से विवाह न करने का निश्चय कर लिया और उस घटना का रहस्य जानने के लिए आपने मुझे, नन्द के मृगया के साथी के नाते, यहाँ बुलाया है । यही बात है न ?

शुद्धोदन

वात तो यही है ।

देवदत्त

तो सुनिए महाराज ! वन में एक रहस्यमय घटना हुई तो थी !

प्रजावती

हुई थी ! ऐसी क्या घटना हुई थी ?

शुद्धोदन

वन मे रहस्यमय घटना हुई और तुम दोनो मे से किसीने भी उसकी सूचना मुझे देने की आवश्यकता नही समझी !

देवदत्त

क्षमा कीजिए महाराज ! केवल सकोच के कारण आपकी सेवा—में उस घटना का वृत्तान्त निवेदित न किया जा सका । और फिर वह घटना आपके सकल्प के प्रतिकूल न थी । वह तो आपकी इच्छा के अनुकूल ही थी ।

शुद्धोदन

इच्छा के अनुकूल ! ऐसी क्या घटना हुई थी ?

देवदत्त

वन मे मृगया के लिए इधर से गए हुए राजकुमार नन्द और उधर-से आई हुई राजकुमारी सुन्दरिका की आपस मे भेंट और बातचीत हो गई थी । सिंह के आखेट मे दोनो के सामने एक दूसरे की शक्ति तथा वीरता का प्रदर्शन भी हो गया था । उसके फलस्वरूप स्वयवर की आवश्यकता नही रह गई थी । यही अन्तिम वात राजकुमार नन्द ने आप-से कही थी !

प्रजावती

यह वात थी ! हमलोग न जाने किस कुशका के जाल मे फँस गए थे !

शुद्धोदन

तब क्या दोनों स्वयंवर के बिना ही विवाह करने को प्रस्तुत हो गए हैं ?

देवदत्त

इसमें क्या सन्देह है ! दोनों वचन-बद्ध भी हो चुके हैं। यह इसलिए नहीं हुआ कि दोनों अपने गुरुजनों से विद्रोह करना चाहते हैं, वरन्, इसलिए हुआ कि दोनों को यह ज्ञात हो चुका था कि दोनों के माता-पिता भी पहले से विवाह-सम्बन्ध के लिए प्रयत्न कर रहे थे।

प्रजावती

यह तो है ही ! दोनों बड़े सुशील हैं !

शुद्धोदन

अच्छा देवदत्त, तुम नन्द को समझा बुझाकर भेजो कि वह यहाँ आकर हमें इस विवाह की विधिवत् स्वीकृति दे जाय। इस विषय में अब न तो संकोच की आवश्यकता है और न विलम्ब की।

देवदत्त

महाराज का आज्ञापालन होगा। प्रणाम !

[देवदत्त का प्रस्थान।]

प्रजावती

कभी-कभी मनुष्य को कैसा भ्रम हो जाता है ! नन्द ने किस आशय-से स्वयंवर को अनावश्यक बताया था और हम लोगों ने उसका क्या आशय समझ लिया ! सुन्दरिका बड़ी सुन्दर, सुशील और वीर लड़की है। इसमें सन्देह नहीं कि उससे विवाह कर लेने के बाद नन्द शाक्य देश के राज्य को अक्षुण्ण रख सकेगा।

शुद्धोदन

इसी लिए पहले विवाह और उसके बाद राज्याभिषेक ! यदि नन्द हमारे परामर्श के अनुसार आचरण करना स्वीकार कर ले, तो

हम दोनो कृतकृत्य हो जायँ, निश्चिन्त हो जायँ !

[नन्द का प्रवेश ।]

नन्द

प्रणाम पिताजी ! माताजी प्रणाम !

शुद्धोदन

जीवित रहो !

प्रजावती

यशस्वी हो !

नन्द

तीर्थस्वरूप माता-पिता का आशीर्वाद जिस पुत्र को प्राप्त रहता है, उसे और किसी वस्तु की आवश्यकता नही रहती ।

शुद्धोदन

बेटा नन्द, राहुल अभी बहुत छोटा है । सिद्धार्थ गृहत्याग कर ही गए । यशोधरा सिद्धार्थ के वियोग मे दुखी रहती है । अब शाक्य-वश के राज्य और गृह-व्यवस्था के भविष्य का सारा भार तुम्हारी और तुम्हारी भावी बहू की आशा ही के आधार पर निर्भर है । अब तुमको हमारा परामर्श स्वीकार करके शीघ्र ही विवाह और राज्याभिषेक का उत्तरदायित्व ग्रहण कर लेना चाहिए ।

प्रजावती

स्वीकार कर लो बेटा, हमारा अनुरोध स्वीकार कर लो !

नन्द

आपके इस अनुरोध से अविश्वास की ध्वनि निकलती है । यह मेरा कितना बडा दुर्भाग्य है कि मुझे जन्म देने वाले माता-पिता भी मुझपर अविश्वास करते है । मैने आज तक आप लोगो के किसी भी अनुरोध-

को कभी अस्वीकार नही किया, फिर भी, आप के मन मे शका है कि मै आपकी आज्ञा की अवहेलना करूँगा । तथागत गौतम बुद्ध ने ससार को शान्ति दी है, उपसम्पदा दी है, पर, मेरे लिए तो उनका भाई होना ही एक अभिशाप बन गया है ।

शुद्धोदन

अभिशाप ! अभिशाप क्यो ?

नन्द

अभिशाप इसलिए कि जिसे देखो, वही यह सदेह करता है कि मै उनकी भाँति ही भिक्षु बन जाऊँगा । मै अपना हृदय चीरकर किस-किस-को दिखाऊँ और कैसे दिखाऊँ ! मै यह कैसे प्रमाणित करूँ कि मै सामान्य हूँ, महान् नही, नन्द हूँ, सिद्धार्थ नही ! स्वयवर को अस्वीकार करने का कारण आपको देवदत्त ने बता ही दिया है । सँकोच ही के मारे मै वास्तविक कारण न बता सका था । इतनी-सी भूल का इतना बडा दण्ड तो मुझे न मिलना चाहिए कि मै आज्ञा की अवहेलना करने वाला कुपुत्र समझा जाऊँ !

शुद्धोदन

क्षुब्ध न हो बेटा ! हमे भ्रम हो गया था । अब हमे कोई सन्देह नही रहा कि तुम हमारे दग्ध हृदय को शीतल करोगे, हमारी आशा-लता-को फिर से हरी-भरी करोगे । हम दोनो आज ही सारी व्यवस्था-का आयोजन करते है । शीघ्र ही राजकुमारी सुन्दरिका से तुम्हारा विवाह होगा । विवाह के बाद ही तुम्हारा राज्याभिषेक हो जायगा !

नन्द

जैसी आप की इच्छा ! अच्छा, अब मुझे आज्ञा दीजिए । कुछ प्रसिद्ध सगीतज्ञ आए हुए है , उनके स्वागत-सत्कार का अयोजन करना है । प्रणाम !

शुद्धोदन

शतायु, सुखी और यशस्वी हो ।

[नन्द का प्रस्थान ।]

प्रजावती

कितना भोला और भला है यह नन्द !

शुद्धोदन

आज की यह सन्ध्या शाक्यवश के जीवन मे एक नया प्रभात लाना चाहती है । इससे बढकर हम दोनो का सौभाग्य और क्या हो सकता है कि नन्द कपिलवस्तु के राज्य की और सुन्दरिका अन्त पुर के प्रासादो की व्यवस्था सँभाले । दोनो मिलकर आयुष्मान् राहुल का पुत्र की भाँति लालन-पालन करे और हम तीनो, मै, तुम और यशोधरा, निश्चिन्त होकर तथागत के आदर्शो के अनुसार निर्वाण की खोज मे अलग अलग दिशाओ मे प्रव्रजन करे !

प्रजावती

ऐसा ही होगा नाथ !

शुद्धोदन

यदि ऐसा ही हुआ, तो हमारे जीवन की निराशा की मरुभूमि में आशा के हरे-भरे अकुर लहलहाएँगे । हम धन्य हो जाएँगे प्रिये, कृत-कृत्य हो जाएँगे । प्राणप्रिय पुत्र के विवाह और राज्याभिषेक के सौभाग्य-का सुख ! इतना बडा वैभव ! कुछ समझ ही में नही आता कि उसे हम कैसे बटोरे, कैसे सँभाले ! अविरत उत्सव-आयोजनो का उत्साह ही हमें इतने बडे सुख को सँभालने की शक्ति दे सकता है ।

प्रजावती

पहले कुछ समय विश्राम कर लीजिए महाराज ! फिर सारी व्यवस्थाओ के सम्बन्ध मे उचित आज्ञाएँ दीजिएगा ।

शुद्धोदन

विश्राम ! अब विश्राम के लिए अवकाश कहाँ है? बडे भाग्य-से ऐसा अवसर मिलता है । मैं अभी प्रधान अमात्य को बुलाकर सारी

व्यवस्था कराता हूँ। इस अवसर पर मैं अपने सारे साधनों का उपयोग करना चाहता हूँ। नन्द का विवाह और राज्याभिषेक ऐसी धूम-धाम से होना चाहिए कि कपिलवस्तु में नया जीवन उत्पन्न हो जाय, घर-घर में नए उत्साह की लहर दौड़ जाय और सारे भारत में शाक्यवंश के वैभव का यश-सौरभ फिर फैल जाय।

[पट-परिवर्तन ।]

तीसरा दृश्य

[कपिलवस्तु । कुम्भक का घर । प्रातःकाल ।]

[कुम्भक का प्रसन्न मुद्रा में प्रवेश ।]

कुम्भक

अरी भद्रा! कहाँ हो? इधर तो आओ! इधर तो आओ श्रीमती कुंडेश्वरीदेवी!

[नेपथ्य में कुण्डेश्वरी का उत्तर सुनाई देता है ।]

कुण्डेश्वरी

क्या बात है? अभी आई! अभी आई!

कुम्भक

अरे जल्द आओ, जल्द!

[कुण्डेश्वरी का प्रवेश ।]

कुण्डेश्वरी

लो आ गई ! कहो क्या बात है ? क्यो चिल्ला-चिल्लाकर घर गुंजाए दे रहे हो ?

कुम्भक

हर्ष के आवेग मे नटराज शकर नृत्य किया करते थे और योगिराज कपिल शीर्षासन ! मै भी आज हर्ष के मारे फूला नही समा रहा हूँ। कुछ समझ ही में नही आता कि इस समय मै क्या करूँ ! नाचूँ या सिर-के बल खडा हो जाऊँ ?

कुण्डेश्वरी

क्यो, क्यो ? ऐसी क्या बात है ?

कुम्भक

बात यह है कि मुझे अत्यत महान् हर्ष के अनेक समाचार मिले है। इस अवसर पर यदि मै किसी प्रकार का हर्ष प्रकाशन न करूँगा, तो पागल हो जाऊँगा। हर्ष का प्रकाशन तो मुझे करना ही पडेगा, अभी करना पडेगा और अच्छे ढंग से करना पडेगा।

कुण्डेश्वरी

कैसे हर्ष के समाचार ? कैसा हर्ष ?

कुम्भक

अरी भद्रा, तुममे कब समझ आवेगी ? यदि तुममे मौलिक बुद्धि-का अभाव है, तो श्रद्धा के साथ अनुकरण ही करती जाओ ! जब मै कह रहा हूँ "अत्यत महान् हर्ष", तब तुम केवल "हर्ष" क्यो कह रही हो ? हर्ष मत कहो, महान् हर्ष कहो, अत्यत महान् हर्ष ! प्रत्येक वस्तु की कोटि-के अनुसार उसका विशेषण निश्चित करना पडता है। यह अत्यत तीव्र और सूक्ष्म बुद्धि का काम है।

कुण्डेश्वरी

कुछ बताओ तो सही कि क्या हुआ !

कुम्भक

हुआ नही, होने वाला है। अरे नही, होनेवाला नहीं, होनेवाले है। एक नही, दो-दो आयोजन होनेवाले है। साधारण नहीं, महान्, महान् नही, अत्यन्त महान् दो दो आयोजन होनेवाले है। पहले महाराज शुद्धोदन के राजकुमार नन्द का विवाह और फिर उनका राज्याभिषेक। एक के बाद एक, दो दो महामहोत्सव। अरी भद्रा, क्या बताऊँ। ऐसे भाग्य खुले है कि किसीके न खुले होगे।

कुण्डेश्वरी

कब होगा विवाह ?

कुम्भक

शीघ्र से शीघ्र। तथागत गौतम बुद्ध जब तक सारे ससार को पूर्ण रूप से भिक्षु नही बना लेते, तब तक गृहस्थ इस पृथ्वी पर रहेंगे ही, जब तक गृहस्थाश्रम का अस्तित्व है, विवाह भी होते ही रहेगे, जब तक विवाह होते रहेगे, बालबच्चे भी होगे ही और जब तक यह सब होता रहेगा, तब तक भाँति भाँति के आनन्दउल्लास, समारोहसम्मेलन, उत्सवआयोजन होते ही रहेंगे। इसीको यदि दार्शनिक भाषा में कहूँ, तो यो कह सकता हूँ कि मेरे पूर्वजो ने अपने जीवन मे एक महान् दार्शनिक सिद्धान्त की उपलब्धि की थी।

कुण्डेश्वरी

वह क्या ?

कुम्भक

वह यह कि मनुष्य अमर है, मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्तियाँ अमर है, फलस्वरूप विवाह अमर है, गृहस्थाश्रम अमर है और बालकों के जन्म भी अमर है।

कुण्डेश्वरी

को होगी कोई उपलब्धि। उससे हमें क्या लाभ हुआ ?

कुम्भक

लाभ ? लाभ ही नही, महान् लाभ हुआ है ! उन्होने इसी महान् दार्शनिक सिद्धान्त के साथ अपने वशजो के जीवन और जीविका का अटूट सूत्र बाँध दिया है ।

कुण्डेश्वरी

वह कैसे ?

कुम्भक

ऐसे कि उन्होने अपनी महान् बुद्धिमत्ता के द्वारा अपने और अपने वशजो-के लिए पुरोहित का व्यवसाय चुन लिया । अब स्थिति यह है कि जब-तक ससार अमर है, तब तक मनुष्य अमर है, जब तक मनुष्य अमर है, तब तक गृहस्थाश्रम अमर है , जब तक गृहस्थाश्रम अमर है, तब-तक विवाह और पुत्रजन्म अमर है, जब तक विवाह और पुत्रजन्म अमर है, तब तक पुरोहित अमर है, पुरोहित का व्यवसाय अमर है और जब तक पुरोहित का व्यवसाय अमर है, तब तक पुरोहित, उसकी पत्नी और उसके पुत्रपुत्रियो की विशाल सेना कभी भूखो नही मर सकती । /

कुण्डेश्वरी

अच्छी शृखला मिलाई !

कुम्भक

अरी भद्रा ! यह शृखला साधारण नही है । इस महान् शृखला-के लिए हमे अपने पूर्वजो के प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करनी चाहिए और उनकी पवित्र स्मृति मे जीवनभर बारबार दडवत् प्रणाम करते रहना चाहिए ! करो दडवत् प्रणाम ! मै भी करता हूँ, तुम भी करो ! उन महान् पूर्वजो का भक्तिभाव से स्मरण करो !

[कुम्भक लबा लेटकर दडवत प्रणाम करता है ।]

कुण्डेश्वरी

यह सब नाटक तुम्हीको शोभा देता है। मुझे इसके लिए अवकाश नही है। मुझे रसोई बनानी है।

कुम्भक

जिन पूर्वजो की कृपा से इतना द्रव्य मिलता जा रहा है कि घर मे प्रतिदिन दो बार रसोई बनाई जा सके, उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के लिए प्रणाम करने मे भी कृपणता दिखलाती हो! अरी भद्रा, तुम कब सज्जनो के संस्कार सीखोगी?

कुण्डेश्वरी

अपनी सज्जनता अपने पास रखो! मुझे काम है। मै जाती हूँ!

कुम्भक

सावधान कुंडेश्वरी! हम स्पष्ट कहे देते है। यदि तुम हमारी इसी प्रकार अवहेलना करती रहोगी, तो हम केश कटवाकर और काषाय-वस्त्र पहनकर भिक्षु बन जायँगे और सीधे तथागत गौतम बुद्ध के धर्मसघ-में जा मिलेंगे। फिर तुम कहाँसे रसोई बनाओगी और कहासे अपनी विशाल सन्तानसेना को खिलाओगी?

कुण्डेश्वरी

क्या संतान मेरी ही है, तुम्हारी नही? क्या मैने ही तुम्हारी संतान-को रसोई बना-बनाकर खिलाने का ठेका लिया है। मै ऐसी धमकी मे आने-वाली नही हूँ। यदि तुम भिक्षु बनोगे, तो मै भी तुम्हारे घर में आग लगा-कर भिक्षुणी बन जाऊँगी। मै वहाँ भी तुम्हारा पीछा न छोडूँगी!

कुम्भक

वहाँ भी मेरा पीछा न छोडोगी? पर, गौतम बुद्ध बडे दयालु है। उन्होने हम जैसे पतियों पर दया करके स्त्रियो के लिए अपने भिक्षुसघ-का द्वार ही बन्द कर दिया है। तुम्हे वह भिक्षुणी बनने की अनुमति ही न देगे। फिर क्या करोगी?

कुण्डेश्वरी

यदि ऐसा हुआ, तो मैं भिक्षुणी बने बिना ही तुम्हारे पीछे पीछे तुम्हारे पाखंड का भंडाफोड़ करती फिरूँगी। जहाँ जहाँ तुम जाओगे, वहाँ वहाँ जाकर तुम्हारी वास्तविकता जनता, भिक्षुओं और स्वयं तथागत गौतम बुद्ध के सामने रखूँगी।

कुम्भक

अरी भद्रा! तुम बड़ी प्रचंड हो! मुझे विश्वास हो गया कि तुम मेरा किसी भी प्रकार पिंड न छोड़ोगी! मेरे भाग्य में सदा तुम्हारे वचन-में बँधा रहना ही लिखा है। उससे छूटने का कोई मार्ग ही नहीं है! जब जीवनभर तुम्हारे साथ रहना ही पड़ेगा, तब क्यों न उसे अधिक से अधिक सुखमय बनाने का यत्न करूँ! अधिक से अधिक सम्पन्न हुए बिना अधिक-से अधिक सुख मिलना कठिन है। इसलिए धन प्राप्त करने के नित्य-नवीन उपाय सोचने पड़ेंगे। अच्छा देवी, एक काम करो। आजकल तरुण पुरुषों में भिक्षु बनने की प्रथा बहुत प्रबल होती जा रही है। उनकी पत्नियाँ बहुत दुखी हैं। तुम उनका एक महिला-महाविद्यालय खोलकर उसकी प्रधान आचार्या बन जाओ!

कुण्डेश्वरी

महाविद्यालय कैसा?

कुम्भक

एक ऐसा महाविद्यालय, जो स्त्रियों को विधिवत् उन उपायों की शिक्षा दे, जिनसे पतियों को भिक्षु बनने से रोका जा सके। तुमसे बढ़कर इस विद्या-में निपुण और कौन हो सकती है? तुम सब तरह से उसकी प्रधान आचार्या बनने योग्य हो। उसकी विद्यार्थिनियों की संख्या इन दिनों ऐसे बढ़ेगी, जैसे वर्षाऋतु में केंचुए बढ़ते हैं!

कुण्डेश्वरी

पर, उससे मुझे क्या लाभ होगा?

कुम्भक

लाभ? महालाभ होगा! संसार का सबसे महत्त्वपूर्ण लाभ, द्रव्य-लाभ! तुम्हारी सैकडों शिष्याएँ जब सैकडों मुद्राएँ प्रतिमास दक्षिणा-में तुम्हें दिया करेंगी, तब तुम मुझसे भी अधिक कमाई करने लगोगी। परिवार की प्रधान सदस्य उस समय तुम गिनी जाया करोगी, मै नही। इस संसार का नियम ही यह है कि इसमे जो जितना अधिक धन कमाता है, उसका उतना ही अधिक सम्मान होता है। तुम अपने उस महाविद्यालय की प्रधान संरक्षिका के पद के लिए भी कपिलवतु ही मे शीघ्र ही एक सम्पन्न महिला पा सकोगी।

कुण्डेश्वरी

वह कौन?

कुम्भक

राजकुमारी सुन्दरिका, जो शीघ्र ही कपिलवस्तु के भावी शासक राजकुमार नन्द की रानी बनने वाली है! उनके भावी जीवन का मुख्य कार्यक्रम अपने पति नन्द को भिक्षु बनने से रोकने की निरन्तर चेष्टा करते रहना ही होगा और तुम्हे पति को गृहस्थी की रस्सी मे निरन्तर बाँधे रहने के ऐसे ऐसे गुर याद हैं कि उन्हे बता-बताकर तुम सुन्दरिका देवी-को सदा अपनी मुट्ठी मे रख सकोगी!

कुण्डेश्वरी

क्या सचमुच मै इस प्रकार तुमसे अधिक धन कमाने लगूँगी?

कुम्भक

निस्सन्देह! समय की गति इस समय कुछ ऐसी ही है। इस परिवर्तनशील संसार मे कभी कोई व्यवसाय उन्नति करता है और कभी कोई। एक युग था कि पुरोहित का व्यवसाय इस क्षेत्रमे बडे उच्च शिखर-पर था। इधर गौतम बुद्ध के धर्मप्रचार ने पशुबलि, कर्मकाड और यज्ञ के वैभव के प्रति जनता और शासको को अत्यन्त उदासीन बना दिया

है। इसके फलस्वरूप बड़े-बड़े प्रचंड कर्मकांडी पुरोहित आजकल भूखों मरने लग गए हैं। किन्तु, इसने एक नए व्यवसाय के उत्कर्ष की संभावना पैदा कर दी है। बुद्धिमान् लोग समय के परिवर्तन को देखकर अपना व्यवसाय बदल देते हैं। अब तुम्हें भिक्षु-निवारक-महिलाविद्यापीठ खोलकर दोनों हाथों से धन बटोरना आरम्भ कर देना चाहिए।

कुण्डेश्वरी

क्या सचमुच मेरा विद्यालय चल निकलेगा ?

कुम्भक

क्यों नहीं ? पर, यह निश्चित न समझ बैठना कि कमाई में मैं तुमसे पिछड़ ही जाऊँगा। भविष्य में तुम्हारे लड़के तुमसे इस विषय में भले ही हार जायँ, मैं तो कमाई के सम्बन्ध में तुमसे सरलता से हार माननेवाला नहीं हूँ। अपने जीवनकाल तक के लिए तो मैंने अपना प्रबन्ध कर ही लिया है। मेरे जीवनकाल में तो मेरे मध्यम-मार्ग के सिद्धान्त के पाश में से निकलना धनिकों और शासकों के वश की बात नहीं है। मैंने कर्मकाण्ड और अहिंसा के समझौते का स्वर्णसिद्धान्त ढूँढ निकाला है। वह इस युग का सबसे महान् दार्शनिक सिद्धान्त है। उसने मुझ श्रीमान् पंडित कुम्भकाचार्य शर्मा मध्यममार्गी का देशभर में डंका बजा दिया है, डंका !

कुण्डेश्वरी

तो क्या तुम्हारा पुरोहित का व्यवसाय भी चलता ही रहेगा ?

कुम्भक

मेरे मध्यममार्ग के सहारे मेरा व्यवसाय ऐसा चलेगा कि सारा संसार भौंचक होकर देखता ही रहेगा। ऐसे चलेगा, जैसे चक्रवर्ती सम्राट् का सोने का खरा सिक्का चलता है। कुम्भकाचार्य की विकट खोपड़ी का लोहा संसार को मानना ही पड़ेगा।

कुण्डेश्वरी

क्या एक पुरोहित के रूप में राजकुमार नन्द के विवाह और राज्याभिषेक में तुम्हें सचमुच बहुत धन मिलने की आशा है ?

कुम्भक

अरी भद्रा! मुझे उन दोनों आयोजनों में इतना धन मिलेगा कि घर भर जायगा घर! इतनी मुद्राएँ घर में आएँगी कि तुम्हें चोरों की शंका से रात-रातभर जागना पड़ा करेगा! इतने लड्डू आएँगे कि उनके लिए कई नए हंडे मोल लेने पड़ेंगे। इतना सोमरस मिलेगा कि उसे भरकर रखने के लिए घड़ों की कमी पड़ जायगी। तभी तो मैं कह रहा था कि मुझे अत्यन्त महान् हर्ष के समाचार मिले हैं। मैं फिर कहता हूँ कि हर्ष के प्रकाशन के बिना मैं पागल हो जाऊँगा। हर्ष के प्रकाशन का मार्ग बताओ। शीघ्र बताओ कि मैं हर्ष के मारे नाचूँ या सिर के बल खड़ा हो जाऊँ!

कुण्डेश्वरी

चाहे जो करो! तुम बुद्धिमान् तो थे ही, भाग्यशाली भी सिद्ध हो रहे हो! तुम्हारी सफलता में मुझे अब कोई सन्देह नहीं रहा।

[पटाक्षेप ।]

तीसरा अंक

पहला दृश्य

[कपिलवस्तु । नन्द का प्रासाद । मध्याह्न]

[सुन्दरिका वीणा बजा रही हैं । पास ही नन्द का एक अधूरा चित्र चित्राधार पर लगा हुआ दिखाई दे रहा है । चित्र के निकट चित्र बनाने-की साधनसामग्री रखी है । नन्द प्रवेश करते हैं । उनके आते ही सुन्दरिका वीणा बजाना बंद कर देती हैं ।]

नन्द

रुक क्यों गई सुन्दरिका ? वीणा बजाना बन्द क्यों कर दिया ? बजाओ ! बजाती क्यों नहीं हो ?

सुन्दरिका

अब तो तुम आ गए। अब यह नही, अब तो हृदय की वीणा बजेगी।

नन्द

क्या हृदय की वीणा मेरी अनुपस्थिति मे नही बजती ?

सुन्दरिका

तुम्हारी अनुपस्थिति मे जैसे यह घर सूना सा लगने लगता है, वैसे ही मेरे हृदय की वीणा भी मौन हो जाती है।

नन्द

इसलिए यह बाहर की वीणा बजानी पडती है। क्यो ? ऐसा क्यो ?

सुन्दरिका

हृदय के स्वरो के मौन हो जाने पर बाहर की झकारो से सहायता लेनी पडती है।

[नन्द अपने अधूरे चित्र तथा चित्र-सामग्री की ओर देखते है।]

नन्द

और यह चित्र ? यह चित्र किसका है ? यह किस लिए ?

[सुन्दरिका चित्र की ओर मुड़ती है।]

सुन्दरिका

अभी यह चित्र अधूरा है। पूरा बन जाने पर यह तुम्हे अवश्य अच्छा लगेगा। यह तुम्हारा ही चित्र है। इसीको बनाने क लिए मै आजकल चित्रकला का अभ्यास कर रही हूँ।

नन्द

तुम्हारी सगीतसाधना अकेली ही हृदयो मे उथलपुथल उत्पन्न कर देने के लिए पर्याप्त है। यदि तुम चित्रकला की भी साधना करने लगोगी, तो यह ससार कहाँ रहेगा ?

सुन्दरिका

मेरे हर कार्य की अनुचित प्रशंसा करना तुम्हारा स्वभाव ही बन गया है। अभी तो मैंने केवल कुछ रेखाएँ खींचना ही सीखा है। देखें कब तक कुछ सीख पाती हूँ और कब तक तुम्हारा चित्र पूरा कर पाती हूँ।

नन्द

यदि चित्र ही बनाना है, तो उन महान् पूर्वजों के बनाओ, जिनकी वीरता और उदारता की कहानियों से इतिहास के पृष्ठ के पृष्ठ भरे पड़े हैं और जिनका पुण्यस्मरण कर आज भी भुजाओं में स्फुरण होने लगता है, वक्ष स्थल फूल उठता और मस्तक उन्नत हो जाता है। मुझ जैसे अकिंचन-का चित्र बनाने से क्या लाभ?

सुन्दरिका

मानव केवल अपने हृदय की श्रद्धा ही को तो रूप नहीं देना चाहता, वह अपने स्नेह को भी रेखाओं, स्वरों और अक्षरों में साकार करना चाहता है। तुम्हारी अनुपस्थिति में तुम्हारे चित्र से मुझे कितना सहारा मिलेगा, यह मैं ही जान सकती हूँ, तुम नहीं। और फिर अपने हाथ की बनी प्रत्येक वस्तु की भाँति यह चित्र भी मुझे अत्यन्त प्रिय होगा।

नन्द

किन्तु, मैं अनुपस्थित कब होता हूँ? मेरे दिन का अधिकांश भाग तुम्हारे ही साथ तो बीतता है।

सुन्दरिका

अभी हम दोनों का विवाह हुए थोड़े ही दिन हुए हैं, इसलिए, तुम कुछ समय मेरे पास रह सकते हो। शीघ्र ही वे दिन भी आएँगे, जब तुम मेरे निकट न रह सकोगे।

नन्द

क्यों? क्या मैं भिक्षु बन जाऊँगा? क्या तुम्हें अब भी मुझपर अविश्वास है?

सुन्दरिका

ऐसी बात मुँह पर न लाओ, भूलकर भी नही। इस विषय मे मै बिलकुल निश्चिन्त हूँ। तुम मुझे जो वचन दे चुके हो, उसपर मुझे पूर्ण विश्वास है। उसी पतवार के सहारे तो मैंने तुम्हारे साथ अपने विवाहित जीवन की नौका ससार के सागर मे छोड दी है। पर और बाते भी तो है।

नन्द

वे क्या?

सुन्दरिका

अभी तो मेरे पूज्यपाद श्वशुर, महाराज शुद्धोदन तथा स्नेहशीला सास, महारानी प्रजावती के पास तुम्हारे लिए अनेक योजनाएँ शेष है। वे तुम्हारे लिए जो नया प्रासाद बनवा चुके है, उसमें तुम्हारे प्रवेश करने-का महोत्सव शीघ्र ही मनाया जाएगा। उसके तत्काल बाद ही वे दोनो तुम्हे अपना राज्य सौपकर सन्यास ग्रहण करेंगे। तुम्हारा राज्याभिषेक-महोत्सव भी कुछ ही दिनो मे होनेवाला है।

नन्द

राज्याभिषेक का अर्थ तुम्हारा वियोग तो नही है।

सुन्दरिका

सयोग और वियोग दोनो के अनिवार्य ताने—बाने ही से तो जीवन का वस्त्र बना हुआ है। सन्यास मुझे इसलिए असह्य है कि उससे पति-पत्नी-में चिरवियोग हो जाता है। यो तो जीवन मे सयोग के साथ साथ वियोग भी समय समय पर सहन करना ही पडता है।

नन्द

मै तो तुमसे अपने वियोग की कोई सभावना नही देखता।

सुन्दरिका

मै तो देखती हूँ। राज्याभिषेक होते ही तुम्हे राजयोग की साधना करनी होगी। वह सन्यास की भाँति ही कठिन साधना है। शासक बनने के बाद तुम्हारा वह स्नेह, जिसपर इस समय केवल मेरा एकाधिकार

है, दूसरे रूप में तुम्हारे प्रजाजनों में बँट जायगा। तुम्हें दिनरात उनके हित की कामना और सुख की साधना करनी होगी। हिंस्र पशुओं तथा आततायी मनुष्यों से जनता की रक्षा करने के लिए तुम्हें शस्त्र धारण करने होंगे, अपना पसीना और रक्त बहाना पड़ेगा। आक्रमणकारियों से युद्ध करने में तुम्हारे दिन ही नहीं, महीने भी रणभूमि में बीत जाया करेंगे और मैं कपिलवस्तु में अकेली ही रहा करूँगी।

नन्द

क्या तुम मेरे साथ न चला करोगी? तुम केवल सौन्दर्य और कला ही की रानी नहीं हो, तुम्हें प्रकृति ने इतनी बुद्धि भी दी है कि तुम राजसभा में मेरे महामंत्री का स्थान शोभित कर सको और इतनी शक्ति और वीरता भी तुम्हें प्राप्त है कि तुम युद्धभूमि में मेरे प्रधान सेनापति का कार्य कर सको।

सुन्दरिका

यह मर्यादा के विरुद्ध होगा। तुम्हारे रणभूमि में चले जाने पर मुझे जनता की सेवा की व्यवस्था के लिए कपिलवस्तु ही में रहना होगा और तुम्हारे राजसभा में जाने पर मुझे अन्तःपुर की व्यवस्था का उत्तरदायित्व वहन करना पड़ेगा। समय समय पर होनेवाले तुम्हारे ऐसे वियोगों के लिए मैंने अपनी एक व्यवस्था कर ली है।

नन्द

क्या व्यवस्था कर ली है?

सुन्दरिका

मेरी सखी माधविका दुर्भाग्य के चक्र में फँस गई है। वह तुम्हारे मित्र राजकुमार देवदत्त से विवाह करना चाहती है, पर, देवदत्त भिक्षु बनने के अपने निश्चय पर दृढ़ है। माधविका के जीवन पर दुःख की काली घटा छाई हुई है। मेरे साथ रहने से उनका भी जी बहलेगा और

मेरी भी वियोग की सूनी घड़ियाँ कट जाया करेंगी। इसी विचार से मैने उन्हे अपने पास बुला भेजा है। वह आने ही वाली है।

नन्द

यह तुमने बड़ा अच्छा किया। उनके साथ रहने से तुम्हे बहुत सहायता मिलेगी। यों मैं देवदत्त को समझाने का यत्न कर सकता था, पर, वह सदा से स्वभाव के दुराग्रही है। वह माधविका को स्वीकार करने का मेरा अनुरोध न मानेंगे।

सुन्दरिका

कर्तव्य की पुकार पर जब जब तुम मुझसे दूर चले जाया करोगे, तब तब वियोग के कठिन क्षणो मे मेरी वीणा की झकार, मेरी सखी माधविका का गान, मेरी चित्रकला की साधना और तुम्हारा चित्रदर्शन ही मेरा सबसे बड़ा सहारा हुआ करेगा।

नन्द

और मेरा सहारा? राजयोग की साधना मे मुझे जब जब तुमसे अलग होना पड़ेगा, तब तब मेरा साथी कौन होगा? जानती हो?

सुन्दरिका

कर्तव्यपालन की भावना ही तुम्हारा सबसे बड़ा सहारा होगी।

नन्द

नही। मेरा सहारा होगी तुम्हारी स्मृति, तुम्हारा वह मानसचित्र, जिसे मैं प्रत्येक क्षण अपने हृदय मे रखता हूँ।

[माधविका का प्रवेश।]

माधविका

नमस्कार राजकुमारी! प्रणाम राजकुमार!

सुन्दरिका

आओ बहन माधविका! मुझे विश्वास था कि तुम आओगी और शीघ्र ही आओगी।

नन्द

आपको फिर अपने बीच मे पाकर अत्यन्त हर्ष हो रहा है राजकुमारी !

माधविका

धन्यवाद राजकुमार ! सखी सुन्दरिका, तुम तो यहाँ अपने नव-विवाहित जीवन मे मुझे भूल ही गई थी, पर मुझे तो तुम्हारा स्मरण दिन-रात विकल किया करता था।

सुन्दरिका

यदि भूल गई होती, तो तुम्हें इतने शीघ्र पत्र लिखकर क्यो बुलाती ?

माधविका

कहिए राजकुमार नन्द, आपका राज्याभिषेक कब तक होनेवाला है ?

नन्द

इस विषय मे मैने अपने मातापिता को पूर्ण आत्म-समर्पण करने-का निश्चय कर लिया है। वे जब चाहे, तब मुझे कोई भी उचित सेवा या उत्तरदायित्व सौप सकते है। मै यथाशक्ति उसके निर्वाह का यत्न करूँगा। अच्छा, मै अब चलूँ। आप दोनो बहुत दिनो मे मिली है। वार्तालाप कीजिए।

[नन्द का प्रस्थान।]

सुन्दरिका

तुम्हारे आने से मुझे बडा सहारा मिला है सखी ! विवाहित जीवन-के उत्तरदायित्व का कोई अनुभव न होने के कारण मै बडी व्यग्र थी। तुम जैसी विश्वासपात्र सहेली का अभाव मुझे बुरी तरह अखर रहा था।

माधविका

तुम्हारा सन्देश पाते ही मुझे ऐसा अनुभव हुआ मानो तुमने मेरे ही मन की बात सोची हो। मै भी चाह रही थी कि बचपन की भाँति तुम्हारे

इस नए जीवन में भी तुम्हारी यथासंभव सहायता करूँ। तुम्हारा सन्देश पाते ही मैं चल पड़ी।

सुन्दरिका

इसपर तुम्हारे मातापिता तो अप्रसन्न नहीं हुए?

माधविका

उनका अप्रसन्न होना तो स्वाभाविक ही था। पर, वे समझाने-बुझाने से मान गए। उन्होंने अनुभव से बहुत कुछ सहन करना सीख लिया है। उन्होंने कुछ ही दिन पहले अपने हृदय पर जो भीषण वज्राघात सहन किया था, उसकी तुलना में मेरा यहाँ आना नगण्य ही है।

सुन्दरिका

वज्राघात! वज्राघात कैसा?

माधविका

तुम सब सुन चुकी होगी सखी! वे मेरे विवाह के लिए आग्रह करते ही रह गए और मैंने उनका आग्रह अस्वीकार कर दिया। मैं अपना निश्चय पहले ही कर चुकी थी। उसके असफल होने पर अन्यत्र व्यवस्था कैसे की जा सकती थी!

सुन्दरिका

राजकुमार देवदत्त का हृदय पत्थर का बना हुआ है। उन्हें कितना समझाया गया, पर भिक्षु बनने के अपने निश्चय से वह अणुमात्र भी विचलित नहीं हुए।

माधविका

उनके इस आग्रह के पीछे अभिसंधि थी, इसलिए, उन्हें अपने निश्चय से विचलित करना और भी कठिन हो गया।

सुन्दरिका

अभिसंधि कैसी?

माधविका

तुम जानती ही हो कि वह तथागत गौतम बुद्ध से अपनी बहन यशोधरा के परित्याग के कारण व्यक्तिगत द्वेष रखते हैं। उनका कथन है कि बौद्ध भिक्षु बनकर ही भिक्षु गौतम से प्रतिशोध लिया जा सकता है, और किसी प्रकार से नहीं।

सुन्दरिका

ऐसे व्यक्ति के पीछे तुम क्यों अपना जीवन नष्ट करना चाहती हो माधविका ?

माधविका

क्षमा करो बहन, मैं उनकी निन्दा नहीं सुन सकती। शीलवती नारी अपने हृदय से अपने साथी का चुनाव जीवन में एक ही बार करती है। एक बार चुनाव कर लेने पर वह अपना निश्चय नहीं बदल सकती। वह दूसरा साथी नहीं चुन सकती, भले ही उसे पहला साथी कभी न मिले।

सुन्दरिका

तुम्हारे जीवन की आशाओं के अंकुरों पर भीषण तुषारपात हुआ है सखी! मेरा हृदय तुम्हारी सहानुभूति में सदा द्रवित होता रहेगा।

माधविका

मैं अपने जीवन का अपने ढंग से सदुपयोग करूँगी बहन! उन्होंने तथागत गौतम से प्रतिशोध लेने को भिक्षु बनने का निश्चय किया है। मैं उनके इस संकल्प का प्रायश्चित्त करूँगी। मैं तथागत से प्रार्थना करूँगी कि वह मुझे इसलिए प्रव्रज्या ग्रहण करने की अनुमति दें कि मैं अपने जीवन को बहुजनहिताय अर्पित करके उनके बदले स्वयं प्रायश्चित्त-की आग में अणु अणु करके तपती रहूँ।

सुन्दरिका

तुम्हारा आदर्श महान् है माधविका! पर, वह व्रत कितना कठोर

होगा। शीघ्रता से ऐसा निश्चय न करो। कुछ दिन मेरे पास रहो। मै तुम्हारे दुख मे हृदय से तुम्हारे साथ हूँ।

माधविका

मुझे तुम्हारे स्नेह पर अभिमान है बहन! पर, कर्तव्य का मार्ग निराला है।

सुन्दरिका

स्नेह की मनुहार को भी तो तुम्हे कुछ महत्त्व देना ही पडेगा। मै कुछ दिनो तक तो तुम्हे अपने पास अवश्य रखूँगी। आज के इस क्षण के लिए भी मै तुमसे एक प्रार्थना करती हूँ बहन! उसे स्वीकार करो!

माधविका

तुम्हारे और मेरे बीच मे न तो प्रार्थना की भाषा चल सकती है और न आज्ञा की। इच्छा ही हमारी परस्पर प्रार्थना और आज्ञा हो सकती है। बोलो सखी, क्या चाहती हो? क्या इच्छा है तुम्हारी? मुझे इस समय तुम्हारे लिए क्या करना चाहिए?

सुन्दरिका

केवल एक गान! घडीभर एक गान गाओ सखी! ससार के सम्मान-के कोलाहल मे जैसे मनुष्य स्नेह की एक मुसकान के लिए तरसा करता है, वैसे ही अपने इस नवविवाहित जीवन के उत्सव-आयोजनो मे मै तुम्हारे एक गान के लिए तरस रही थी। राजभवन के कुशल गायक-गायिकाओ के सगीत में मुझे स्वाभाविकता का प्राणस्पर्श न मिल सका। उसपर तो तुम्हारे सरल कठस्वर ही का अधिकार है सखी!

माधविका

बारबार मेरे गीत सुनने की तुम्हारी यह इच्छा बचपन से लेकर अब तक ज्यो-की-त्यो चली आ रही है। तुम यह भी तो नही सोचती कि दो-एक दिन मे तुम राजमहिषी बननेवाली हो।

सुन्दरिका

राजमहिषी तो तुम भी कभी वन सकती थी वहन ! पर, तुमने तो उस मार्ग से मुख ही मोड लिया। तुम्हें देखकर यह पता चलता है कि परिग्रह के मार्ग से परित्याग का मार्ग कितना महान है !

माधविका

सखियो की प्रशसा करने के अपने इस पुराने स्वभाव को भी तुम्हें राजमहिषी वनने के पहले वदल देना चाहिए।

सुन्दरिका

किसी का स्वभाव वदल सकना इतना सरल नही है वहन ! अच्छा तो अव मेरी एक गान की प्रार्थना स्वीकार करो।

माधविका

तो फिर तुम मेरे दुर्वल स्वरो को सहारा देने के लिए अपने हाथो में अपनी महिमामयी वीणा धारण करो।

[सुन्दरिका वीणा हाथों में लेकर वजाना प्रारभ करती है। नन्द का प्रवेश।]

नन्द

वन्द करो वीणा सुन्दरिका ! अनर्थ हो गया ! भारी अनर्थ हो गया !

[सुन्दरिका शीघ्रता से वीणा एक ओर रख देती हैं। वीणा के तार झनझना जाते हैं।]

सुन्दरिका

अनर्थ ! अनर्थ कैसा ?

नन्द

तथागत बुद्ध मेरे द्वार पर भिक्षा के लिए आए और सत्कार पाए बिना ही लौट गए!

सुन्दरिका

हाय! यह तो बहुत बुरा हुआ!

नन्द

इससे बुरा और क्या हो सकता है! मेरे जीवन मे कलंक का अमिट टीका लग गया! लज्जा और दुःख के मारे मैं मरा जा रहा हूँ। मैंने तुम्हें यह वचन अवश्य दिया था कि मैं भिक्षु न बनूँगा, पर, यह वचन कभी नही दिया था कि अपने घर पर आने पर भी अपने बडे भाई का अतिथि-सत्कार न करूँगा।

सुन्दरिका

मैं कब कहती हूँ कि अतिथिसत्कार न किया जाय। तथागत तो आपके बडे भाई हैं, मैं तो सामान्य अतिथियो के सत्कार को भी अपना कुलधर्म मानती हूँ। मैं भी यह सहन नही कर सकती कि तथागत जैसे अतिथि द्वार पर पधारकर योंही लौट जायँ। पर, यह हुआ कैसे?

नन्द

विवाह, नवगृहप्रवेश और राज्याभिषेक! तीन तीन महोत्सवो का आनन्द! राजभवन के सेवक, सेविकाएँ और सारे परिजन मानो मदमत्त हो रहे थे। सब लोग अपने अपने आनन्द आयोजन में लगे हुए थे। तथागत द्वार पर भिक्षा के लिए पधारकर यों ही लौट गए!

सुन्दरिका

और उन्हें किसीने देखा तक नही?

नन्द

किसीको क्या पड़ी थी कि उन्हे देखता! सब लोग मदमत्त जो हो

रहे थे। कितना बड़ा अनर्थ हो गया। तथागत गौतम बुद्ध के चरन पदार्पण से आज राजभवन, नगर, ग्राम और कुटीर सब अपने को धन्य मानते हैं, मुझ अभागे के द्वार पर भिक्षा के लिए आए और सत्कार पाए बिना ही लौट गए।

माधविका

सारे संसार को शान्ति और निर्वाण की उप-सम्पदा बाँटने को राज-पाट छोड़कर निकले हुए तथागत गौतम बुद्ध अपने भाई के द्वार से भिक्षा भी न पा सकें, इससे बढ़कर दुर्भाग्य और क्या हो सकता है।

नन्द

मैं आज संसार का सबसे अधिक अभागा प्राणी हूँ। स्वयं तथागत बुद्ध स्वेच्छा से मुझ अभागे के द्वार पर आए और मैं मायाजाल में ऐसा फँसा रहा कि उन्हें देख तक न पाया। घर के सारे नौकरों, नौकरानियों और परिजनों पर भी मेरी ही मदान्धता की छाया पड़ी हुई थी। उनमें से कोई उन्हें न देख पाया। इतने बड़े कलंक, इतने लज्जाजनक लाछन को सहन करते हुए जीवित रहना मेरे लिए नरकवास से भी अधिक दुःख-कर है।

सुन्दरिका

तथागत को लौटे कितना समय हो गया?

नन्द

बाहर से आनेवाली एक सेविका ने अभी बताया कि उसने तथागत को अभी हमारे द्वार से लौटते देखा है।

माधविका

तब तो तथागत अभी अधिक दूर न पहुँच पाए होंगे।

नन्द

हाँ, वह अभी निकट ही होंगे। मैं अभी जाकर उन्हें आदरसहित लिए आता हूँ।

सुन्दरिका

क्या उन्हें लाने को और किसीको नही भेजा जा सकता ?

नन्द

नही ! तथागत का असम्मान जघन्य अपराध है। इतने बडे अपराध-का प्रायश्चित्त मेरे जाए विना न हो सकेगा। किसी सेवक या सेविका-को भेजकर बुलवाना तो और अधिक अपमान करना होगा !

माधविका

यदि आप लोग आज्ञा दें, तो मै जाकर तथागत को सादर लिवा लाऊँ।

नन्द

नही, आप क्यो जाएँगी ! अपराध मेरा है, उसका प्रायश्चित्त भी मुझीको करना होगा। ससार के इतिहास में इतने बडे अनर्थ, इतने बडे अन्याय का और कोई उदाहरण न मिलेगा। सिद्धार्थकुमार ने मानवता-के कल्याण के लिए सर्वस्वत्याग किया, इतने बडे राज्य को तृण की भांति ठुकरा दिया, पत्नी और पुत्र को छोड दिया। यदि वह राज्यत्याग न करते, तो क्या मुझे राज्य का उत्तराधिकार मिल सकता था ! इतना महान् भाई केवल भिक्षा के लिए स्वेच्छा से चलकर मेरे द्वार पर आया और मै नराधम उसे मुट्ठीभर भिक्षा देने योग्य भी न हुआ ! मुझे भारी कलंक लग गया ! मै इसका प्रायश्चित्त करूँगा। तथागत के चरण पकडकर क्षमा मागूँगा। उन्हे लौटा लाऊँगा। उनका हार्दिक आदर-सत्कार करूँगा। मुझे अविलम्ब जाना चाहिए।

[नन्द गमनोद्यत होते हैं।]

सुन्दरिका

शीघ्र लौटना प्रिय, मुझे न भूल जाना !

नन्द

अभी आता हूँ प्रिये, अभी आता हूँ। मैं तुम्हें कैसे भूल सकता हूँ, तुम्हें दिए हुए अपने वचन को कैसे भूल सकता हूँ?

[नन्द का प्रस्थान ।]

[पट-परिवर्तन]

दूसरा दृश्य

[कपिलवस्तु । शुद्धोदन का प्रसाद । सायंकाल ।]

[शुद्धोदन और प्रजावती वार्तालाप कर रहे हैं ।]

प्रजावती

अब और क्या चाहिए महाराज ? आपके पुत्र नन्द का विवाह हुआ । अप्सराओं से सुन्दर और ऋषिकन्याओं से गुणवती पुत्रवधू घर में आई । बहूबेटों के लिए नया प्रासाद बनकर तैयार हुआ । शीघ्र ही वे दोनों नवगृहप्रवेश करेंगे । नन्द का राज्याभिषेक भी शीघ्र ही हो रहा है । फिर भी आप चिन्तित क्यों दिखाई देते है ?

शुद्धोदन

निश्चिन्त वही हो सकता है प्रजावती, जिसके सामने कोई समस्या

न हो। मेरी चिन्ता का कारण एक नई समस्या है। सिद्धार्थकुमार के वियोग ने मुझे मरणासन्न कर रखा था। मेरी इच्छा थी कि किसी प्रकार एक वार अपने प्यारे पुत्र सिद्धार्थ का मुख देखूँ। इसके लिए कितने प्रयत्न किए! कितने लोगों को सिद्धार्थ को कपिलवस्तु ले आने-को भेजा? पर, जो गया, भिक्षु वनकर वही रह गया। लौटकर समाचार देने तक न आया। कितनी लम्बी प्रतीक्षा के वाद मेरे प्यारे सिद्धार्थ ने कपिलवस्तु में पदार्पण किया! किन्तु, उसने आते ही एक नई समस्या खडी कर दी।

प्रजावती

नई समस्या कैसी?

शुद्धोदन

तुम क्या जानती नही हो प्रजावती? अपनी ही राजधानी मे सिद्धार्थ-कुमार आजकल घर-घर भीख माँगते फिरते है। कपिलवस्तु के राज-वंश के लिए यह कितनी लज्जा की वात है! इससे मेरी स्थिति यह हो गई है कि लज्जा के मारे किसीको अपना मुँह नही दिखा सकता। आजकल इसी समस्या की चिन्ता मुझे दिन रात खाए जा रही है। नन्द के विवाह, नवगृहप्रवेश और राज्याभिषेक की सारी प्रसन्नता इससे फीकी पड गई है।

प्रजावती

चिन्ता करने से तो आपके स्वास्थ्य पर वुरा प्रभाव पडेगा। इसके निराकरण का कुछ उपाय करना चाहिए।

शुद्धोदन

सारे उपाय असफल हो चुके है। सिद्धार्थकुमार को अत्यन्त अनुनय विनय करके समझाया, पर, वह नही मानते। कहते है "भिक्षाटन मेरा कुलधर्म है, मै जहाँ जाऊँगा, इसी कुलधर्म का अनुसरण करूँगा। मेरे लिए कपिलवस्तु तथा अन्य स्थानो में कोई अन्तर नही है।"

प्रजावती

कुलधर्म कैसा ? भिक्षाटन कुलधर्म कैसा ? शाक्यो के कुल का धर्म तो आदिकाल से राज्यसचालन रहा है, भिक्षाटन नही।

शुद्धोदन

सिद्धर्थिकुमार कहते है "अब मेरा कुल बदल गया है, अब मैं शाक्यों-के कुल के बदले बुद्धो के कुल का हो गया हूँ और भिक्षाटन ही युगो से बुद्धो का कुलधर्म रहा है।"

प्रजावती

कैसा विचित्र लडका है ! बचपन ही से इस लडके की सारी बातें अनोखी रही है। रोगियो, वृद्धो और मृतको को सब लोग प्रतिदिन देखते है, पर किसीपर कोई विशेष प्रभाव नही पडता। किन्तु, मेरा बेटा सिद्धार्थ रोगी, बूढे और शव को देखते ही कह उठा—"मै तो प्राणिमात्र-को रोग, जरा और मरण के बन्धन से मुक्त करने को निकल रहा हूँ !" तबसे अब तक मेरा बच्चा लौटकर ही नही आया। कितने वर्ष बीत गए ! बहुत बुलाने पर अब जब दो चार दिन को आया भी है, तो अपने ही पूर्वजो की इस राजधानी मे घर-घर भीख माँगता फिर रहा है। जिधर से निकलता है, उसके पीछे भीड की भीड हो लेती है।

शुद्धोदन

यह तो और भी लज्जा की बात है ! उस भीड के सामने ही वह घर-घर से भिक्षा माँगता है ! अपने ही राज्य मे भीख ! इस बूढे पिता-का अनुरोध भी नही मानता ! कैसा निर्मोही हो गया है ! क्या इसीके लिए माँबाप बच्चो को जन्म देते है ?

प्रजावती

जन्म देना सरल है महाराज, पर, पाल-पोसकर बडा करना बहुत कठिन काम है ! मुझसे पूछिए स्वामी ! मैंने इस सिद्धार्थ को कैसी कठिनाई से पाला है ! बहन महामाया तो इसे जन्म देकर ही चल बसी

थी ! मैंने इसके पीछे अपना रक्त और पसीना एक कर दिया था ! मैंने इतना किया, पर, मैं सिद्धार्थ से उसके बदले कुछ नहीं चाहती, शपथ करके कहती हूँ, कुछ नहीं चाहती ! मैं केवल यह चाहती हूँ कि वह सुख-से रहे। उसका काषाय वस्त्र पहनकर वन-वन फिरना और भिक्षा का रूखा-सूखा अन्न खाना मेरे कलेजे में छेद किए देता है। मेरा हृदय माँ-का हृदय है। माँ के हृदय की वेदना कोई नहीं समझता !

शुद्धोदन

मैं तुम्हारे हृदय की वेदना का अनुभव कर सकता हूँ प्रजावती ! कपिलवस्तु का बच्चा-बच्चा इस बात का साक्षी है कि तुमने सिद्धार्थ को नन्द से अधिक स्नेह से पाला था। इसमें कोई सन्देह नहीं कि नन्द के राज्यारोहण का सुख तुम्हारे जीवन का बहुत बड़ा सौभाग्य होगा, पर, उस सुख में भी जब तुम्हारे हृदय में सिद्धार्थ के वियोग का काँटा खटकेगा, तब तुम्हारी विकलता असह्य हो उठेगी। किस दुर्दिन में तुमने सिद्धार्थ-पर अपना सारा वात्सल्य उँडेल दिया था प्रजावती ! अभागिनी माँ ! अभागिनी नारी !

[माधविका का प्रवेश ।]

माधविका

आप दोनों के लिए मैं बुरा समाचार लाई हूँ। राजकुमार नन्द भिक्षु बन गए हैं।

शुद्धोदन

नन्द भी भिक्षु बन गया ! कब ? कहाँ ?

प्रजावती

नन्द भिक्षु ! कैसे ? नन्द भिक्षु कैसे बन गया ?

माधविका

उन्होंने तथागत गौतम बुद्ध के उपदेश पर सन्यास ले लिया।

शुद्धोदन

कब ले लिया सन्यास ?

प्रजावती

हाय दुर्भाग्य ! नन्द ने भी सन्यास ले लिया !

माधविका

तथागत बुद्ध आज राजकुमार नन्द के द्वार पर भिक्षा के लिए आए थे।

शुद्धोदन

भिक्षा के लिए ! नन्द के द्वार पर सिद्धार्थ ! भाई के द्वार पर भाई भिक्षा माँगने पहुँचा ! इससे बढकर दुर्भाग्य क्या हो सकता है ! इससे अधिक लज्जा की बात क्या हो सकती है ? नन्द ने उसे रोका नही ?

माधविका

राजकुमार नन्द को तथागत के पधारने का पता ही न चला।

प्रजावती

पता ही न चला ! क्यो ?

माधविका

उत्सव आयोजन की प्रसन्नता में मग्न सेवक-सेविकाओ ने तथागत-को देखा ही नही !

शुद्धोदन

देखा ही नही ! किसीने नही देखा ?

माधविका

जी हाँ, किसीने नही देखा और तथागत भिक्षा पाए बिना ही लौट गए।

प्रजावती

अनर्थ हो गया ! भाई के द्वार से भाई योही लौट गया ! उसे भिक्षा भी न मिली !

शुद्धोदन

भिक्षा भी न मिली ! सिद्धार्थ योंही लौट गया ! यह और भी बुरा हुआ !

माधविका

कुछ देर बाद जब बाहर से आनेवाली सेविका ने बताया कि तथागत लौट गए हैं, तब राजकुमार नन्द दुखी होकर उसी समय उन्हें बुलाने को चल पड़े !

प्रजावती

नन्द उसी समय चल पड़ा ! भाई को बुलाने को चल पड़ा ! भाई के लिए भाई के हृदय में ऐसा ही प्रेम होता है। मेरे सिद्धार्थ और नन्द एक-दूसरे को सगे भाइयों से अधिक प्रेम करते आए हैं।

माधविका

राजकुमार नन्द के जाते ही राजकुमारी सुन्दरिका की विकलता असह्य हो गई और जब बाहर से आए हुए एक अन्य सेवक ने कुछ समय के बाद यह समाचार सुनाया कि राजकुमार नन्द ने सन्यास ग्रहण कर लिया है, तब तो उन्हें मूर्छा ही आ गई !

प्रजावती

हाय अभागी सुन्दरिका !

शुद्धोदन

हमारे साथ-साथ उस निरपराधिनी का भी भाग्य फट गया !

माधविका

जाते समय कुमार नन्द सुन्दरिका को दिए हुए अपने वचन को बड़ी दृढ़ता से दुहरा गए थे। कह गए थे कि मैं शीघ्र ही लौटकर आऊँगा। पर, हुआ कुछ और ही।

शुद्धोदन

नन्द ने अचानक सन्यास कैसे ले लिया ? बड़ी विचित्र बात है !

माधविका

सेवक कह रहा था कि तथागत कुछ दूर जा चुके थे। उनके पास पहुँचते ही राजकुमार नन्द ने उन्हें प्रणाम किया और उनसे अपने घर चलकर सत्कार ग्रहण करने की प्रार्थना की।

प्रजावती

इसपर सिद्धार्थ ने क्या कहा?

माधविका

कुछ नही, तथागत ने प्रणाम के उत्तर में केवल एक बार राजकुमार नन्द के सिर पर हाथ रखा और आगे चलते गए। नन्द भी उनके पी चलते गए। चलते-चलते, कुछ समय बाद, उन्होने चुपचाप अपन भिक्षापात्र नन्द के हाथ में दे दिया।

शुद्धोदन

नन्द के हाथ मे भिक्षा-पात्र दे दिया?

माधविका

जी हाँ, उन्होने नन्द को अपना भिक्षापात्र दे दिया और उसी प्रकार आगे चलते गए। नन्द ने चाहा कि कुछ कहें, पर, तथागत के साथ चलनेवाली नगरवासियो की भीड के कारण कुछ भी न कह पाए। इस प्रकार तथागत के पीछे नन्द भी उनका भिक्षापात्र लिए हुए चलते ही चले गए। चलते-चलते वे दोनो पास के न्यग्रोध-उपवन मे जा पहुँचे, जहाँ तथागत अपने सैकडो भिक्षु शिष्यो के साथ आजकल ठहरे हुए है।

प्रजावती

नन्द भी वही जा पहुँचा?

माधविका

जी हाँ। कुछ समय बाद उस सेवक को एक भिक्षु से ज्ञात हुआ कि तथागत के उपदेश पर कुमार नन्द ने प्रव्रज्या ग्रहण कर ली है।

शुद्धोदन

हाय रे दुर्भाग्य ! सिद्धार्थ के बाद नन्द भी भिक्षु बन गया ! निष्ठुर दुर्दैव, तूने मुझे कहीका नही रखा ! अब मैं क्या करूँ ? अब तो मुझे कोई आशा दिखाई नही देती !

प्रजावती

सुकुमारी सुन्दरिका ! तेरा भी भाग्य इस प्रकार फूटना था !

माधविका

मुझमें इतनी क्षमता तो नही है कि मै आप लोगो से धैर्य धारण करा सकूँ, मैं नम्रतापूर्वक अनुरोध अवश्य कर सकती हूँ। राजकुमारी सुन्दरिका जिस धैर्य के साथ इस भीषण आघात को सहन करने का यत्न करने लगी है, उसी धैर्य की आप दोनो से आशा करना क्या उचित नही है ?

शुद्धोदन

धैर्य ? अब धैर्य की बात न करो। धैर्य कहाँ तक धारण किया जा सकता है ? मनुष्य के धैर्य की कोई सीमा होती है ! छोटे-से कलेजे में एक साथ इतने घाव कैसे सहन किए जा सकते है ? महामाया का देहान्त पहला वज्रपात था, जिसे मैंने सहन किया। सिद्धार्थ का गृहत्याग दूसरा भीषण आघात था, जिसके मारे आज तक मेरा हृदय सिसक रहा है। नन्द के संन्यास ने तो मेरे कलेजे को कुचल ही डाला है। अब मै कैसे धैर्य धारण करूँ ?

प्रजावती

इन लडको को विधाता ने सब कुछ सिखाया, पर, माँ के हृदय की वेदना को समझना नही सिखाया ! ये लडके यदि क्षणभर को माँ बनकर देखें, तो इनकी आँखें खुल जायँ !

शुद्धोदन

जीवन की सारी योजनाएँ धूल में मिल गई ! सोचा था कि जीवन-भर दुःख के आघात सहन करनेवाले हृदय को अन्तिम दिनो में कुछ सुख देखने को मिलेगा। पर, यह सोचते समय मै यह भूल गया कि सुख के

नाम पर मेरे भाग्य में विधाता ने केवल एक बडा-सा शून्य ही लिख दिया है।

माधविका

वास्तव में आप लोगो के जीवन की कहानी एक अत्यन्त करुण और दुखान्त कहानी है। मेरा हृदय आप दोनो के लिए गम्भीर सहानुभूति से भरा हुआ है। पर, इस विषय पर एक दूसरी दृष्टि से भी विचार किया जा सकता है।

शुद्धोदन

वह क्या?

माधविका

आपकी पुत्रवधू सुन्दरिकादेवी आपके लिए पुत्री के समान है। उनकी सहेली होने के नाते मै भी आपकी एक पुत्री ही हूँ। यदि आप लोग मुझे क्षमा करें, तो, इस समय मेरे मस्तिष्क मे जो कुछ दूसरे प्रकार के विचार आ रहे है, उन्हें भी मै आपके सामने निस्सकोच रूप मे प्रकट कर दूँ।

प्रजावती

सकोच की क्या बात है बेटी! तुम कौन कोई दूसरी हो! जो कुछ कहना चाहो, निस्संकोच होकर कहो!

माधविका

मेरा नम्र निवेदन है कि आप लोग दुख और शोक के घने अन्धकार को विवेक की ज्योति की किरण से दूर करने का यत्न कीजिए। विचार करने का एक और भी दृष्टिकोण हो सकता है। स्थिति पर शान्ति और गम्भीरता से विचार करने की आवश्यकता है। अपने दृष्टिकोण को स्पष्ट करने के लिए मै आपसे कुछ प्रश्न पूछना चाहती हूँ।

शुद्धोदन

क्या पूछना चाहती हो, पूछो बेटी!

माधविका

तथागत गौतम जहाँ जहाँ जाते हैं, वहाँ वहाँ बहुत बड़ी संख्या में लोग उनके अनुयायी बन जाते हैं। वह जिस मार्ग पर चलते हैं, उसपर सैकड़ो व्यक्तियो की भीड उनके पीछे हो लेती है। ऐसा उन्हीके साथ क्यो होता है, हममें से और किसीके साथ क्यो नही होता? क्या इसका कारण यह नही है कि हम लोग अपने व्यक्तिगत क्षुद्र स्वार्थो में फँसे हुए हैं और तथागत बुद्ध ने जनकल्याण के महान् लक्ष्य के लिए अपना जीवन अर्पित कर दिया है?

शुद्धोदन

क्यो नही! सिद्धार्थ ने उच्च आदर्शों ही के लिए गृहत्याग किया है।

माधविका

तब फिर उनके सन्यास पर आप लोग दुख के बदले गौरव का अनुभव क्यो नही करते? आप लोग यह क्यो नही अनुभव करते कि मानवता के कल्याण के लिए, बहुजन के हित के लिए यौवनकाल मे राज्य, वैभव, सुन्दर पत्नी और सुख के समस्त साधनो को ठुकराकर वन-वन और ग्राम-ग्राम घूमनेवाले तथागत बुद्ध के माता-पिता कहलाकर आप लोग गौरवान्वित हुए हैं, धन्य हुए हैं, कृतकृत्य हुए हैं।

प्रजावती

यह तो है ही बेटी!

माधविका

यदि ऐसा ही है, तो आप लोग क्यो नही अपने दुःख, शोक, माया, मोह और ममता के सारे बन्धन तोडकर प्रसन्न चित्त से तथागत का समर्थन करते, क्यो नही देशदेशान्तर मे मुक्त कठ से उद्घोष करते फिरते कि गौतम बुद्ध केवल हमारे नही, वरन्, सारे ससार के हैं, इसीलिए वह महान् हैं और हम सौभाग्यशाली हैं कि हम उनके माता-पिता रहे हैं?

शुद्धोदन

तुम ठीक कहती हो बेटी! हमारा कर्तव्य यही है। मोह ने हमारी

दृष्टि धुंधली कर रखी थी। शोक के गहन अन्धकार में तुमने हमें विवेक-की ज्योति की किरण दी है।

प्रजावती

इतनी-सी आयु में तुममें इतनी आत्मज्योति कहां से आ गई बेटी!

माधविका

मैं आपकी प्रशंसा के योग्य नही हूँ। अनुभव का आघात सहे बिना मनुष्य की आँखें नही खुलती। मैं अपनी वेदना आप लोगो पर प्रकट तो नही कर सकती, पर, इतना कह सकती हूँ कि मैंने भी अपने जीवन-में भीषण आघात सहन किया है। उस आघात की आप लोग कल्पना नही कर सकते, पर, यह सत्य है कि उसीने मेरी आँखे खोली है। मैं चाहती हूँ कि कुमार नन्द के गृह-त्याग के आघात से आप दोनो को भी जीवन का नया प्रकाश प्राप्त हो, नई दृष्टि उपलब्ध हो। आघात ही से प्रकाश मिलता है और अनुभव ही से ज्ञान की प्राप्ति होती है।

शुद्धोदन

मिल रहा है बेटी, हमें भी कुछ प्रकाश मिल रहा है। हम भी मोह-के अन्धकार के पार कुछ-कुछ देख पा रहे हैं। सन्यास तो हम दोनो को भी ग्रहण करना था, पर, हम चाहते थे कि नन्द को राज्य सौंपकर फिर गृहत्याग करें।

माधविका

मुझे क्षमा कीजिए महाराज, बुढापे का वैराग्य कोई वैराग्य नही है! वैराग्य, त्याग और बलिदान तो वह है, जिसका उद्भव भरी जवानी में हो। त्याग तो किया है उन सिद्धार्थकुमार ने, जो यौवन के प्रथम चरण ही में यशोधरा-जैसी सुन्दर और सुशील पत्नी और कपिलवस्तु-जैसे विशाल और समृद्ध राज्य को आत्मप्रेरणा के एक ही क्षण में छोडकर चल दिए। और सिद्धार्थ से भी कठिन त्याग किसका है, जानते हैं आप ? गलो

प्रजावती

सिद्धार्थ से भी कठिन त्याग? सिद्धार्थ से भी कठिन त्याग किसका है बेटी?

माधविका

नन्द का! सिद्धार्थ तो जन्म ही से महान् थे, बचपन ही से विशेष विभूति से युक्त थे। उनका त्याग तो असाधारण पुरुष का, महान् क्षमताशाली व्यक्ति का त्याग था। उनके लिए कुछ भी कठिन नही था। उन्होंने जो कुछ किया, वह उन जैसे महापुरुष के लिए अत्यन्त स्वाभाविक, अत्यन्त सरल था। किन्तु, नन्द तो सदा से सामान्य थे, इसीलिए उनका त्याग अधिक कठिन, अधिक महत्त्वपूर्ण है। उनमें ऐसी कोई विशेष विभूति नहीं थी कि उन्हें इतने बड़े त्याग के योग्य समझा जाता। वह तो सदा से साधारण राजकुमार की भाँति खाने, पीने, हँसने, खेलने, गाने, बजाने, आखेट करने और सुख से रहने के अभ्यासी थे। सुन्दरिका के प्रेम में भी वह इतने गहरे डूब गए थे कि उससे उनका उद्धार असम्भव था। फिर भी, अपनी समस्त आकांक्षाओ की दुर्बलताओ के होते हुए भी, उन्होने एक क्षण में सर्वस्वत्याग कर दिया। उनका त्याग उनके लिए अत्यन्त कठिन था, इसीलिए वह अत्यन्त असाधारण है। यदि न्याय की तुला को विचलित न होने दिया जाय, तो महापुरुषो के त्याग की तुलना में सामान्य जनो का त्याग अधिक महत्त्वपूर्ण सिद्ध हो सकता है।

शुद्धोदन

वास्तव में नन्द ने आश्चर्यजनक साहस का काम किया है। उससे किसीको ऐसी आशा न थी।

माधविका

नन्द का यह त्याग इतिहास में एक अनोखी घटना के रूप में लिखा जायगा। सुखोपभोग की आकाक्षाओ की समस्त दुर्बलताओ से घिरा हुआ एक सामान्य राजकुमार नन्द नए विवाह, नवगृहप्रवेश के आयोजन

और सामने आए हुए राज्याभिषेक के स्वर्ण-अवसर को क्षणभर मे ठुकरा-कर चल देता है! कैसा अद्भुत त्याग है! आप दोनो गौतम बुद्ध के मातापिता कहलाकर जितने धन्य हुए है, गौतम नन्द के मातापिता कहलाकर उससे कम धन्य नही हुए है। अपने इस महान् गौरव का स्वाभिमान के साथ अनुभव कीजिए। आप-जैसे सौभाग्यशाली व्यक्तियो-के लिए मोह, शोक और दुःख का निर्माण नही हुआ है! बुद्ध और नन्द-के माता-पिता होना तो आप लोगो का महान् गौरव है ही, इससे भी बढकर एक और गौरव है।

प्रजावती

वह क्या?

माधविका

वह यह कि आप लोग यशोधरा और सुन्दरिका जैसी साध्वी पुत्र-वधुओ के सास-ससुर है, जिन्होने यौवन के प्रथम चरण ही मे पतिवियोग-की उत्कट वेदना के हलाहल विष को अपने प्राणो मे पचाया है! शकर ने तो अपने विष को अपने कण्ठ ही मे रख लिया था, पर, उन दोनो देवियो ने अपनी व्यथा के विष को अपने हृदय के अन्तराल में धारण किया है। ससार की बहुत कम स्त्रियाँ इतने धैर्य का परिचय दे सकी है! उनके सास-ससुर होकर आप दोनो और भी धन्य हुए है! अपने सौभाग्य-पर सुख का अनुभव कीजिए। विवक की आँखें खोलिए। दुःख का कोई कारण नही है!

[५८—परिवर्तन ।]

तीसरा दृश्य

[कपिलवस्तु के पास न्यग्रोध नामक शाक्य के उपवन में बौद्ध भिक्षुओं के निवासस्थान का एक भाग। दिन का तीसरा पहर।]

[आनन्द और नन्द बातचीत कर रहे हैं।]

नन्द

कैसी गम्भीर शान्ति है, भिक्षु आनन्द, इस उपवन के उस भाग में, जिसमें तथागत बुद्ध ध्यानमग्न है। उनके आसपास सैकडो भिक्षु अपनी-अपनी साधना में लगे हुए है, पर, इतने बडे समुदाय में भी कही कोई शब्द सुनाई नही देता। इतनी गम्भीर शान्ति उपवन के इस भाग में क्यो नही है ?

आनन्द

उपवन के इस भाग में भी वैसी ही गम्भीर शान्ति होती, भिक्षु नन्द, यदि यह भाग आनेवालो के ठहरने के लिए सुरक्षित न रखा गया होता। भिक्षुओ के समान शान्ति-साधना का अभ्यास अभी उन लोगो को नही है, जो दूर-दूर से तथागत से मिलने यहाँ आते है। धीरे-धीरे उन्हें भी इसका अभ्यास हो जायगा। आनेवालो के साथ कठोरता का व्यवहार तो नही किया जा सकता। अनुशासन के सम्बन्ध में उनके साथ तो कुछ उदारता ही का व्यवहार करना पडता है।

नन्द

कैसे आश्चर्य की बात है कि प्रात.काल से सायकाल तक व्यवस्था रखने पर भी आनेवालो का क्रम ही नही टूटता! उनके स्वागत का उत्तरदायित्व आप बड़े धैर्य के साथ सँभालते है। मै देखता हूँ कि उनकी संख्या दिन-पर-दिन बढती ही जा रही है।

आनन्द

तथागत गौतम बुद्ध की महिमा ही ऐसी है भिक्षु नन्द! उनका उर्ध्व आदर्श और निर्मल चारित्र्य जनता को उनके पास दूर-दूर से खीच लाता है। तुम्हारे सम्बन्ध में भी कैसा अद्भुत चमत्कार हुआ! तथागत-के सम्पर्क में आते ही तुम्हारा युग-युग का मायामोह का बन्धन एक ही क्षण में टूट गया। तुम्हे भिक्षुसघ मे, अपने बीच में, पाकर हमें जो आनन्द हो रहा है, उसे शब्दों मे प्रकट नही किया जा सकता।

नन्द

सच है भिक्षु आनन्द, तथागत की महिमा ऐसी ही है! पारस के स्पर्श से लोहा भी सोना हो जाता है! मेरे प्रणाम करते ही परम कारुणिक तथागत ने मेरे मस्तक पर अपना वरद हाथ रख दिया। उनके हाथ के अमृत-स्पर्श से एक ही क्षण में मेरे हृदय का सारा मोह दूर हो गया। तथागत की कृपा होते ही मेरे जीवन में व्याप्त माया के गहरे अन्धकार को विवेक के प्रकाश की एक ही किरण ने दूर कर दिया।

आनन्द

इसका श्रेय तथागत को तो है ही, तुम्हें भी है भिक्षु नन्द ! तथागत-की करुणा तो पात्र और अपात्र सभी पर समान रूप से बरसा करती है, पर, उसे उचित रूप में ग्रहण तो पात्र ही कर पाता है, अपात्र नहीं । तुम्हें भले ही उसका ज्ञान या अनुभव न हो, पर, तुम्हारे मन की गहराई में त्यागभावना पहले से छिपी हुई अवश्य थी । तथागत की प्रेरणा ने उसे केवल उभार दिया । यदि तुममें सात्त्विक भावना पहले से न होती, तो तुम्हें दीक्षा की उपसम्पदा कभी न मिली होती । यदि कुएँ में पानी ही न हो, तो उसमें से घड़े में भरकर रस्सी के द्वारा ऊपर क्या खींचा जा सकता है ?

नन्द

आज तो आयुष्मान् राहुल को भी तथागत ने दीक्षा की उपसम्पदा दे दी है । वह भी एक छोटे-से भिक्षु के रूप में आज से हम लोगों के भिक्षु-संघ में सम्मिलित हो गया है । भिक्षु के काषाय वेश में आयुष्मान् राहुल कितना अच्छा लगता है !

आनन्द

तथागत का पुत्र होने का गौरव जिस आयुष्मान् राहुल को प्राप्त था, वह तथागत के सन्यास के उत्तराधिकार से वंचित कैसे रह सकता था ?

नन्द

शाक्य वंश पर तथागत की विशेष कृपा है । महाराज शुद्धोदन-को छोड़कर अब शाक्यों के राजकुल में ऐसा कोई पुरुष नहीं बचा है, जिसने सन्यास ग्रहण न किया हो । महाराज शुद्धोदन तो अपनी वृद्धा-वस्था के कारण पहले ही से सन्यास लेने का निश्चय कर चुके हैं । वह भी अब शीघ्र ही भिक्षुसंघ में सम्मिलित होंगे । शाक्य वंश का इससे बड़ा सौभाग्य क्या हो सकता है कि उसने तथागत के इंगित पर अपने को सम्पूर्ण रूप से बहुजन के हित के लिए समर्पित कर दिया है ।

आनन्द

यह सब संयोगवश ही हुआ है। तथागत का तो अब न कोई वंश ही रह गया है और न किसी वंश के प्रति उनका विशेष कृपाभाव ही है। समदृष्टि तथागत तो प्राणिमात्र को अपना कुटुम्बी समझते हैं। तुम्हें भी अब सारी मानवता को अपना वंश समझना होगा।

नन्द

मैंने केवल प्रसंगवश शाक्य राजवंश की चर्चा की थी। मेरा आशय और कुछ न था। यह तो अब मैं भी जान गया हूँ कि सारी मानवता भिक्षुओं का वंश है, सारी पृथ्वी उनकी जन्मभूमि और प्राणिमात्र उनके कुटुम्बी। इसी उदार भावना को लेकर मानवता के कल्याण के लिए भिक्षुगण तथागत के नेतृत्व में भ्रमण करते हैं, जिससे प्राणिमात्र जन्म, मरण, जरा, रोग आदि के बन्धनों से मुक्त होकर वास्तविक शान्ति और निर्वाण पा सकें।

आनन्द

यह महान् आदर्श युग-युग से प्रतिष्ठित है और सदा प्रतिष्ठित रहेगा। मानवता के कल्याण के उच्च लक्ष्य को लेकर निर्मल चारित्र्य-वाले व्यक्ति पृथ्वी पर जब-जब निरन्तर भ्रमण का व्रत धारण करेंगे, तब-तब संसार को मोह के अन्धकार में सत्य के प्रकाश की किरण का दर्शन होगा। यह क्रम चिरन्तन है और सदा बना रहेगा। रोग, दुःख, कष्ट, क्लेश से पीडित मानवता ऐसे पवित्र परिभ्रमणों को अपने लिए भूतकाल में भी आशा का संकेत समझती रही है, वर्तमान में भी समझ रही है और भविष्य में भी समझती रहेगी। हम सब अत्यन्त भाग्यशाली हैं कि तथागत जैसे अथक परिव्राजक और मानवता के महान् त्राता के युग में जी रहे हैं और उनके अनुयायी हैं।

[शुद्धोदन, प्रजावती और मालविका-का प्रवेश ।]

शुद्धोदन

सिद्धार्थ कहाँ है भिक्षु आनन्द ?

आनन्द

क्षमा कीजिए गौतम ! तथागत अब सिद्धार्थ नही है। अब वह तथागत बुद्ध है। कहिए, क्या प्रयोजन है ? बैठिए ! सब लोग बैठिए !

[सब बैठते है।]

शुद्धोदन

मुझे तथागत से अभी मिलना है।

आनन्द

वह आपसे अवश्य मिलेगे और अभी मिलेंगे। पर, आपको थोडी प्रतीक्षा तो करनी ही पडेगी। आपका सन्देश इसी समय उन तक नही पहुँचाया जा सकता, क्योकि इस समय तथागत ध्यान में लीन है। ध्यान-का कार्यक्रम समाप्त होते ही मैं उन्हें आपसे अवश्य मिलाऊँगा और शीघ्र ही मिलाऊँगा।

प्रजावती

अब तो आप लोगो के अन्याय की पराकाष्ठा हो गई ! बालक राहुल-को भी आप लोगो ने भिक्षु बना लिया !

आनन्द

क्षमा कीजिए देवी, इस सम्बन्ध मे यदि आपको कोई उलाहना देना हो, तो वह तथागत ही को दीजिएगा। हम लोग तो उनके अनुयायी मात्र है।

माधविका

महाराज गौतम शुद्धोदन तथा महारानी प्रजावतीदेवी तो अपने यहाँ आने का-आशय स्वय बताएँगी, पर, मेरे आज यहाँ आने का एक मुख्य प्रयोजन भिक्षु नन्द को प्रणाम करना भी है।

नन्द

प्रणाम के योग्य तो केवल तथागत बुद्ध है माधविका देवी, मैं तो इस योग्य नही हूँ।

माधविका

हिमालय के उच्च शिखर की वन्दना करनेवालो की ससार मे कोई कमी नही है, कमी यदि है, तो अपने संगठन, साधना और उत्सर्ग से हिमालय को हिमालय बनानेवाले छोटे-छोटे रजकणो की अर्चना करनेवालो की है। मैं तुम्हारी वन्दना करने इसलिए आई हूँ भिक्षु नन्द, कि तुम सामान्य थे और सामान्य से महान् बने हो। तुम्हारी साधना और तुम्हारा त्याग उन महापुरुषो की साधना और त्याग से अधिक महत्त्वपूर्ण है, जो अपनी विशेष क्षमता के कारण अनायास विशेष सफलता प्राप्त करते है।

नन्द

ऐसा न कहिए। तथागत की महत्ता सर्वोपरि है।

माधविका

मै कब कहती हूँ कि तथागत की महत्ता सर्वोपरि नही है? तथागत यदि सूर्य है, तो तुम दीपक हो। सूर्य के लिए प्रखर प्रकाश अत्यन्त स्वाभाविक है, उसके लिए उसे कोई विशेष प्रयास नहीं करना पडता। पर, दीपक तो प्रकाश के लिए मिट्टी के पात्र के आधार के अतिरिक्त तेल भी जुटाता है, बत्ती भी जुटाता है। और फिर वह प्रयत्नपूर्वक धीरे-धीरे जल-जलकर अपने को उत्सर्ग करने की साधना करता है, अपने को मिटाता है। मै तो सूर्य की महत्ता की अपेक्षा दीपक की लघु साधना को अधिक महत्त्व देती हूँ, क्योकि दीपक की लघुता प्रयास करके महान् बनती है, उसे प्रतिकूल परिस्थितियो से कठिन सघर्ष करना पड़ता है। दीपक बीच-बीच में वायु के थपेडे भी सहन करता है।

नन्द

मैं तो सदा साधारण रहा हूँ और आज भी हूँ। मेरा सर्वस्व तो तथागत की दी हुई दीक्षा की उपसम्पदा ही है। मेरी हार्दिक इच्छा है कि मुझे जो उपसम्पदा मिली है, वह सबको मिले। कितना अच्छा होता, यदि आप भी तथागत के हाथों सन्यास की [उपसम्पदा, भिक्षुव्रत का सौभाग्य प्राप्त कर सकेती।

प्रजावती

इसकी सम्भावना कहाँ है? स्त्रियों को सन्यास की दीक्षा देने पर तो प्रतिबन्ध लगा हुआ है। इससे बढ़कर निष्ठुरता क्या हो सकती है, कि पतियों को पत्नियों से और पुत्रों को माताओं से अलग करके भिक्षु बना लिया जाय और पत्नियों और माताओं को भिक्षुणी बनकर अपने जीवन को सार्थक करने, साधना में लगाने और अपनी वेदना भूलने का अवसर ही न पाने दिया जाय।

आनन्द

आप लोगों के पधारने का मुख्य प्रयोजन तो अभी तक मुझे ज्ञात ही न हो सका। तथागत तो इतने दयालु हैं कि बिना प्रयोजन आनेवालों-को भी अपनी करुणा से कृतार्थ करते हैं, पर, यदि प्रयोजन पहले से ज्ञात हो जाता है, तो, सघ को उचित व्यवस्था करने में सुविधा होती है।

शुद्धोदन

मैं तथागत के पास इसलिए आया हूँ कि उनसे यह प्रार्थना करूँ कि वह आज से यह नियम बना दें कि किसी भी नवयुवक या बालक को तब तक भिक्षु न बनने दिया जाय, जब तक उसके माता-पिता या कुटुम्बियों-से अनुमति न ले ली जाय। मैं तथागत से यह कहने आया हूँ कि उनके संन्यासी होने पर मुझे बहुत दुःख हुआ था, नन्द के सन्यास ग्रहण करने-पर भी मुझे बहुत वेदना हुई और राहुल के भिक्षु बनने पर तो मेरे शोक-की सीमा ही नहीं रही। सन्तान के स्नेह का आकर्षण और उसके वियोग-

की पीडा मेरे चमड़े को छेद रही है, चमडे को छेदकर मास को छेद रही है, मास को छेदकर नसो को छेद रही है, नसो को छेदकर हड्डियो को छेद रही है, हड्डियो को छेदकर उसने मुझे बुरी तरह घायल कर दिया है। मेरी प्रार्थना है कि परम कारुणिक तथागत भविष्य में और किसी माता-पिता को ऐसी मर्मवेदना न होने दे।

आनन्द

आपका प्रयोजन उचित प्रतीत होता है गौतम! तथागत का ध्यान-का कार्यक्रम समाप्त होते ही आप अपना निवेदन उनके सम्मुख रखिएगा। आशा है, तथागत इसे अवश्य स्वीकार करेंगे। अच्छा, यह तो बताइए कि अपने सन्यास-ग्रहण के सम्बन्ध मे आपका क्या विचार है!

शुद्धोदन

मै प्रस्तुत हूँ भिक्षु आनन्द! तथागत के सामने अपना यह निवेदन रखने के बाद ही मै सन्यास ग्रहण कर लूँगा।

आनन्द

आपका क्या प्रयोजन है प्रजावती देवी?

प्रजावती

मै तथागत के सामने नारी-जाति की करुण पुकार रखना चाहती हूँ। तथागत को यह तो अधिकार है कि वह पुरुषो को भिक्षु बनाकर नारियो-को पतियो और पुत्रो की वियोगज्वाला मे जलाएँ, पर, साथ ही, उनकी करुणा को नारियो को भी यह अधिकार देना चाहिए कि यदि वे अपनी वेदना को भूलने के लिए अपने जीवन को भी जनकल्याण के लिए उत्सर्ग करना चाहें, तो उन्हें भी दीक्षा लेकर भिक्षु-संघ में सम्मिलित होने का अवसर मिल सके। यदि मेरी यह प्रार्थना तथागत ने स्वीकार कर ली, तो हम चारो, मै, मेरी दोनो पुत्रवधुएँ और राजकुमारी माधविकादेवी, तत्काल सन्यास ले लेंगी।

आनन्द

आपका प्रयोजन भी उचित जान पड़ता है देवी! आशा है, तथागत

आपकी प्रार्थना भी स्वीकार कर लेंगे। उसका फल यह तो होगा ही कि आप चारों साध्वी महिलाओं का भिक्षु-संघ में प्रवेश होगा, यह भी होगा कि भविष्य के लिए स्त्रियों को दीक्षा का मार्ग भी खुल जायगा। अब आप अपना प्रयोजन बताइए माधविकादेवी!

माधविका

यदि तथागत स्त्रियों को दीक्षा का अधिकार न देंगे, तब तो मैं उनसे कुछ न कहूँगी। एक बार फिर भिक्षु नन्द की वन्दना करके लौट जाऊँगी। किन्तु, यदि तथागत ने प्रजावतीदेवी की प्रार्थना स्वीकार करके नारियों-को दीक्षा लेने का अधिकार दे दिया, तो मैं तथागत से अपनी ओर से कुछ विनम्र प्रार्थनाएँ करूँगी।

आनन्द

वे क्या?

माधविका

मैं उनसे कहूँगी कि उन्होंने और भिक्षु नन्द ने यशोधरादेवी और सुन्दरिकादेवी के साथ अन्याय किया है कि सन्यास लेने के पहले उनसे अनुमति नहीं ली। उस अन्याय के परिमार्जन के लिए तथागत को एक बार यशोधरादेवी के और भिक्षु नन्द को सुन्दरिकादेवी के पास उनके निवासस्थान पर जाना चाहिए और उनके त्याग, बलिदान, कष्ट-सहन और धैर्य की प्रशंसा करनी चाहिए। इसका फल यह होगा कि उन स्वाभिमानी महिलाओं के स्वाभिमान की रक्षा होगी, वे उचित प्रतिष्ठा-के साथ सन्यास ग्रहण करेंगी और संसार में नारी-जाति का गौरव बढ़ेगा।

आनन्द

आशा तो है कि आपका यह निवेदन भी परम कारुणिक तथागत स्वीकार कर लेंगे। आपको और क्या कहना है?

माधविका

अपने लिए तो अन्तिम रूप में मुझे तथागत से केवल यही कहना होगा

कि तथागत अपने उच्च आदर्शों के पथ पर मुझे भी अपनी एक अकिंचन और विनम्र अनुयायिनी के रूप मे स्वीकार करे। मै यत्न करूँगी कि अपने भिक्षु-जीवन का प्रत्येक क्षण दुखी मानवता की सेवा मे निष्ठापूर्वक अर्पित करूँ।

आनन्द

औरो के सम्बन्ध में भी आप कुछ कहेंगी ?

माधविका

मै यह कहूँगी कि तथागत की करुणा जगत् के जीवन का बहुत बड़ा सौभाग्य है। जब तक इस पृथ्वी पर तथागत जैसे नेताओ और यशोधरा, सुन्दरिका, आनन्द और नन्द जैसे अनुयायियो की परम्परा अवतरित होती रहेगी, तब तक मानवता को निराश होने का कोई कारण न होगा। उच्च आदर्श का ध्रुव तारा जिनके सामने और निर्मल चारित्र्य का पाथेय जिनके साथ होगा, उन महान् श्रमणकारियो की यात्रा का प्रत्येक चरण प्रत्येक समय में मानवता के कल्याण और बहुजन के हित के लिए ही होगा।

नन्द

औरो के सम्बन्ध मे आप भले ही कुछ भी कहे, पर, मेरे सम्बन्ध में तो आपका प्रशसासूचक शब्दो का प्रयोग करना अत्यन्त अनुचित है, घोर अन्याय है। मैं फिर कहता हूँ माधविकादेवी, कि मै एक अत्यन्त अकिंचन भिक्षु के अतिरिक्त और कुछ नही हूँ। मैने कोई त्याग नही किया। मुझे भूल जाने ही मे इतिहास का हित है।

माधविका

इतिहास तुम्हे भले ही भूल जावे भिक्षु नन्द, पर, इससे तुम्हारा महत्त्व कदापि कम न होगा। तुम कहते हो कि तुम अकिंचन हो, मै कहती हूँ कि यही तुम्हारी महत्ता है। अकिंचन होते हुए भी, सामान्य होते हुए भी, दुर्बल होते हुए भी, तुमने इतना महान् त्याग किया है यह तुम्हारी

पहली विशेषता है और अपने महान् त्याग को त्याग हीन मानना तुम्हारी दूसरी विशेषता है। जिस राज्य के पीछे लोग सगे भाइयों और पिताओं की हत्या कर सकते हैं, उसे तुमने तृण की तरह ठुकरा दिया। जिस नारी-सौन्दर्य के पीछे लोग पागल बने फिरते हैं, उससे तुमने एक ही क्षण में सदा के लिए मुँह मोड़ लिया! और यह सब तुमने कब किया है? जब तुम्हारे यौवन का प्रथम चरण प्रारम्भ हो रहा है। यह सब तुमने किस स्थिति में किया है? उस स्थिति में, जब तुम अत्यन्त सामान्य, अत्यन्त साधारण और अकिंचन हो, तुम में विशेषता, अलौकिक महत्ता या विभूति का अणुमात्र भी नहीं है। कोटि-कोटि सामान्य मानवों की सरल त्यागभावना के प्रतीक! तुम्हें बारम्बार प्रणाम!

नन्द

इस अन्याय को रोको भिक्षु आनन्द! यह अब मुझसे नहीं सहा जाता! इस अनुचित प्रशंसा ने मुझे त्रस्त कर डाला है। मैंने कुछ नहीं किया, कोई त्याग नहीं किया। माधविकादेवी मेरी प्रशंसा करके बहुत बड़ा अन्याय कर रही हैं।

आनन्द

यदि यह अन्याय है, तो संसार में और कोई न्याय हो ही नहीं सकता! तुम्हारी यह प्रशंसा सर्वथा उचित है भिक्षु नन्द! माधविकादेवी के मुख से युग-युग का सत्य बोल रहा है। यह ध्रुव सत्य है कि केवल महापुरुष ही मानवता का चिरकल्याणसाधन नहीं कर सकते। इसके लिए उनके बहुसंख्यक और सच्चरित्र अनुयायियों के, सामान्य साधकों के सहयोग की भी आवश्यकता है। ऐसे साधकों के सहयोग की, जो साधारण होते हुए भी, किसी विशेषता या विभूति से युक्त न होते हुए भी, बड़े से बड़ा त्याग और बलिदान क्षणभर में कर दिखाने का साहस प्रकट कर सकें और अपने त्याग और बलिदान को कभी त्याग और बलिदान न मानें।

मानवता का चिरकल्याण तभी सभव होगा, जब घर-घर से नन्द जैसे त्यागी तरुण साधना के पथ पर आगे बढेंगे। भोगवाद, स्वार्थ और अवसरवाद के प्रहारो से पीडित संसार का नया निर्माण त्याग और बलिदान के आधार पर ही हो सकेगा।

[पटाक्षेप ।]

शुद्धिपत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४	१२	नियुक्ति	नियुक्त
५	१	भगवत	भगवत्-
८	९	समितियो	समितियाँ
९	२७	अराधक	आराधक
१०	१५	प्रियत	प्रियता
१२	१३	इच्छा	इच्छा ने
२१	१६	तथागत,	तथागत
२४	२३	उन उन	उन
२६	२५	चकी	चुकी
,,	२६	सना	सुना
३२	२७	खडग	खड्ग
३४	४	विवशस	विश्वास
३५	१५	हल्का	हलका
३६	८	बुद्धिमान-	बुद्धिमान्
,,	९	महान	महान्
३९	५	झटके को	झटके की
,,	२१	पहले के	पहले की
४१	३	प्रधान,	प्रधान
४६	१०	परियाप्त	पर्याप्त
,,	२४	,,	,,
४८	१७	पहले	बदले
५१	२०	लती	लेती

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५२	२६	आपक	आपके
५४	१६	हृदय	हृदय
५६	११	मैर्न	मैंने
६३	२	पाटलिपुत्र	कपिलवस्तु
६६	२६	आखट	आखेट
६८	१८	देवदर्न	देवदत्त
७७	१	दृश्य २	दृश्य ३
७९	१	"	"
"	२५	दडवत	दंडवत्
८३	२	भखो	भूखो
९०	६	ौका	नौका
९५	८	चर्हती	चाहती
९७	२६	तुमन	तुमन
९९	२	बुद्धजन	बुद्ध, जिनक
१०१	३	भर्ल	भूल
"	४	"	"
१०२	२	प्रसाद	प्रसाद
१०३	६	भेजा ?	भेजा !
१०७	५	माधविका	माधविका
१०७	२१	फट	फूट
१०८	१०	पी	पीछे
१०९	४	दुर्देव	दुर्दैव
११०	२३	ओर	और
"	२६	शद्धोदन	शुद्धोदन
११२	२७	? गलो	लोग ?